ओ३म्

दयानन्दसन्देश

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट का मासिक पत्र

जुलाई २०१८ Date of Printing = 05-07-18
प्रकाशन दिनांक= 05-07-18
वर्ष ४७ : अङ्क ९
दयानन्दाब्द : १९४
विक्रम-संवत् : आषाढ़-श्रावण २०७५
सृष्टि-संवत् : १,९६,०८,५३,११९

संस्थापक : स्व० ला० दीपचन्द आर्य
प्रकाशक व सम्पादक : धर्मपाल आर्य
सह सम्पादक : ओम प्रकाश शास्त्री
व्यवस्थापक : विवेक गुप्ता

कार्यालय :
दयानन्दसन्देश (मासिक)
४२७, मन्दिर वाली गली, नया बांस,
खारी बावली, दिल्ली-६
दूरभाष : २३९८५५४५, ४३७८११९१
चलभाष : ९६५०५२२७७८
E-mail : aspt.india@gmail.com

एक प्रति ५.०० रु० वार्षिक शुल्क ५०) रुपये
आजीवन सदस्यता ५००) रुपये
विदेश में २०००) रुपये

इस अंक में

- नशे से पतन की ओर..... २
- वेदोपदेश ३
- आध्यात्मिक गुरु और.... ४
- शब्द प्रमाण ७
- इतिहासकार की कलाकारी.... ११
- भारतीय मुसलमानों..... १६
- आइए विचार करें.... २१
- अमरीकी शासन.... २३

विशेष : दयानन्द सन्देश में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। उनसे सम्पादक की पूर्णतया सहमति आवश्यक नहीं है। अतः किसी भी चर्चा/परिचर्चा एवं वाद-विवाद के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी होंगे।

सत्यार्थप्रकाश

प्रचार संस्करण ३००० रुपये सैकड़ा
स्पेशल (सजिल्द) ५००० रुपये सैकड़ा में प्राप्त करें।

नशे से पतन की ओर बढ़ता देश और समाज

(मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून, मो0- 09412985121)

मनुष्य इस संसार की सबसे श्रेष्ठ कृति है, जिसे सर्वोत्कृष्ट, ज्ञानवान, पवित्र व धार्मिक स्वभाव वाले परमेश्वर ने अपने सर्वज्ञ व परमोत्कृष्ट ज्ञान से बनाया है। मनुष्य को परमात्मा ने क्यों बनाया? इस प्रश्न का उत्तर हमें वेद और ऋषियों द्वारा वेदों के व्याख्यान रूप में लिखे गये शास्त्रों व ग्रन्थों से होता है। जन्म का कारण जीवात्मा के पूर्व जन्म के कर्म हैं, जिनके फल सुख व दुःख का उपभोग कराने के लिए परमात्मा जीवात्माओं को जन्म देता है। सत्यासत्य का विवेचन करने पर ज्ञात होता है कि परमात्मा मनुष्यों को अच्छे कर्मों का फल सुख व बुरे कर्मों का फल दुःख के रूप में देता है। यदि मनुष्य जन्म में, जो कि उभय योनि है अर्थात् इसमें हम कर्मों को भोगते हैं और नये कर्म करते भी हैं, हम कोई बुरा कर्म न करें और केवल अच्छे कर्म ही करें, तो हमें कोई दुःख ईश्वर की व्यवस्था से प्राप्त नहीं होगा। अच्छे कर्मों वा-कर्तव्यों का ज्ञान परमात्मा ने सृष्टि के आरम्भ में चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य अंगिरा को एक-एक वेद ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद का ज्ञान देकर कराया है। इन चार ऋषियों के बाद ब्रह्मा, मनु आदि अनेक ऋषि हुए और यह परम्परा महाभारतकाल तक लगभग १.९६ अरब वर्षों तक चली है। अन्तिम ऋषि जैमिनी जी को बताया जाता है और उसके बाद विछिन्न ऋषि परम्परा ऋषि दयानन्द पर पुनर्जीवित हुई और वहीं समाप्त भी हो गई। ऋषि दयानन्द के अनुयायियों में पं० गुरुदत्त विद्यार्थी, पं० शिवशंकर शर्मा काव्यतीर्थ, डॉ. रामनाथ वेदालंकार, स्वामी विद्यानन्द सरस्वती आदि अनेक वैदिक विद्वान हुए हैं जो ऋषितुल्य ही पवित्र हृदय व देश-समाज के हितैषी थे। हमारा समस्त वैदिक साहित्य एवं ऋषि मुनि मदिरापान वा नशे के विरुद्ध थे जिसका प्रमुख कारण नशीले पदार्थ मद्य व शराब आदि से बुद्धिनाश और चारित्रिक पतन का होना है। देश की आजादी के आन्दोलन में अंग्रेज सरकार का शराब की बिक्री के लिए विरोध किया जाता था। धरने व प्रदर्शन किये जाते थे। गांधी जी ने भी कहा था कि जब देश आजाद हो जायेगा, तो कलम की नोंक से पहला काम देश में पूर्ण नशा-शराब बन्दी का किया जायेगा। इसके विपरीत आजादी के बाद केन्द्र व राज्यों में जो सरकारें रहीं, उन सभी ने शराब व नशे के पदार्थों की बिक्री में उन सिद्धान्तों का पालन नहीं किया, जिसकी बात आजादी के आन्दोलन में देश के सभी बड़े नेता किया करते थे। सरकार को राजस्व से प्रेम है परन्तु ऐसा लगता है कि वह राजस्व का चिन्तन करते हुए नैतिकता व देशवासियों के चरित्र के मापदण्डों को विस्मृत कर शराब की बिक्री में वृद्धि के नाना प्रकार के उपायों को बढ़ावा देती है। यह दुःखद एवं अत्यन्त चिन्ताजनक है। इससे देश का भविष्य व देश के माता-पिता व परिवार रोग, अल्पायु, आर्थिक दिवालियापन आदि अनेक रोगों व व्याधियों से ग्रस्त रहते हैं और उनमें से अधिकांश का जीवन दुःखमय व नरक के समान बनता है।

मनुष्य जीवन की उन्नति में जो बाधक कार्य हैं, उनका त्याग सबको करना चाहिये। ऐसा इसलिये करना चाहिये कि उन कार्यों को करने से मनुष्य की अवनति, पतन व जीवन दुःखमय बनता है। शराब व नशा करने से मनुष्य की शैक्षिक उन्नति तो बाधक होती ही है, उसका स्वास्थ्य भी बिगड़ता है और उसके फेंफड़े, लीवर व अन्य अंग-प्रत्यंग कमजोर व रोगी हो जाते हैं। शराब पीने के कुछ समय बाद ही व्यक्ति आलस्य से घिर जाता है और किसी भी अच्छे कार्य में उसकी रुचि नहीं होती। मदिरापान के कुछ बार के अभ्यास से ही वह उसका आदी हो जाता है और उसका ध्यान हर समय

शेष पृष्ठ २५ पर

ओ३म्

वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। महर्षि दयानन्द

वेदोपदेश मन, वचन, कर्म से सत्य का आचरण करना महान व्रत है। और ईश्वर कृपा से सत्याचरण करने में समर्थ होता है तथा सत्याचरण का फल ही सुख तथा इससे विपरीत आचरण ही दुःख देता है।

वामदेवः ऋषिः अग्निः = ईश्वरः देवता। भुरिगुष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः।

अथ यत्सत्याचरणेन सुखं भवेत्तदुपदिश्यते।।

अब जो सत्याचरण से सुख होता है, उसका उपदेश किया जाता है।।

ओ३म् अग्ने व्रतपते व्रतमचारिषं तदशकं तन्मेऽराधीदमहं। यऽएवाऽस्मि सोऽस्मि।। (यजु० २। २८)

पदार्थ **(अग्ने)** सत्यस्वरूपेश्वर! **(व्रतपते)** व्रतं नियतं यत् न्याय्यं कर्म तत्पतिस्तत् सम्बुद्धौ **(व्रतम्)** सत्यलक्षणं **(अचारिषम्)** चरितवान् **(तत्)** पूर्वोक्तम् **(अशकम्)** शक्तवान् **(तत्)** मयाचरितुं योग्यम् **(मे)** मम् **(अराधि)** संसाधितम् **(इदम्)** प्रत्यक्षमाचरितुम् **(अहम्)** मनुष्यः **(यः)** यादृश कर्मकारी **(एव)** निश्चयार्थे **(अस्मि)** वर्ते **(सः)** तादृशकर्मभोजी **(अस्मि)** भवामि।

अयं मन्त्रः शं. १/६/३/२२-२३ व्याख्यातः।।

सपदार्थान्वयः हे **(व्रतपते)** व्रतं नियतं यन्न्याय्यं **(कर्म)** तत्पतिस्तत्संबुद्धौ **(अग्ने)** सत्यस्वरूपेश्वर। भवता कृपया मदर्थं यत् यद् **(इदम्)** प्रत्यक्षमाचरितुं व्रतं सत्यलक्षणम् **(अराधि)** संसाधितम **(तत्)** पूर्वोक्तम् **(अहम्)** मनुष्यः **(अशकम्)** शक्तवान् **(अचारिषम्)** चरित्रवान् यत् मया **(अराधि)** संसाधितम् **(तत्)** चरितुम् योग्यमेव **(अहं भुञ्जे)** योऽहं यादृशं कर्म कार्यस्मि **(तत्)** सोऽहं तादृशफलभोग्यः तादृश फलभोजी **(अस्मि)** भवामि।

भाषार्थः हे **(व्रतपते)** व्रत अर्थात् न्यायोचित कर्मों के पति **(अग्ने)** सत्यस्वरूप परमेश्वर! आपने कृपा करके मेरे लिए जो **(इदम्)** यह प्रत्यक्ष रूप से आचरणीय **(व्रतम्)** सत्य लक्षणयुक्त व्रत **(अराधि)** बनाया है **(तत्)** वह पूर्वोक्त व्रत मेरे द्वारा आचरण में लाने याग्य है, उसे **(अहम्)** मैं मनुष्य **(अशकम्)** कर सका **(अचारिषम्)** और आचरण में लाया। जो मैंने व्रत सिद्ध किया **(तत्)** उस आचरण करने योग्य व्रत का **(एव)** ही मैं भोग करता हूँ। और जो जैसे कर्म करने वाला मैं **(अस्मि)** हूँ **(सोऽहम्)** वह मैं वैसा ही कर्मों का भोग करने वाला भी **(अस्मि)** हूँ।

भावार्थः मनुष्येणेदम् निश्चेतव्यं मयेदानीं यादृशं कर्म क्रियते तादृशमेव ईश्वरव्यवस्थया फलं भुज्यते भोक्ष्यते च।

नहि कश्चिदपि जीवः स्वकर्म विरुद्धं फलं अधिकं न्यूनं वा प्राप्तुं शक्नोति।

तस्मात् सुखभोगाय धर्माष्येव कर्माणि कार्याणि, यतो नैव कदाचिद् दुःखानि स्युरति।।

भावार्थ मनुष्य को यह निश्चय करना चाहिए कि मैंने इस समय जैसा कर्म किया है, वैसा ही ईश्वर की व्यवस्था से फल मिल रहा है और मिलेगा।

कोई भी जीव अपने कर्म से विरुद्ध अधिक वा न्यून फल नहीं प्राप्त कर सकता। इसीलिए सुखयुक्त भोगों की प्राप्ति के लिए धर्मानुसार ही कर्म करें, जिससे कभी दुःख प्राप्त न हो।

(''दयानन्द-यजुर्वेद-भाष्य-भास्कर'' से उद्धृत, व्याख्याता स्व० श्री पं० आचार्य सुदर्शनदेव)

आध्यात्मिक गुरु तथा उनकी विडम्बना

(धर्मपाल आर्य)

आध्यात्मिकता समाज की, राष्ट्र की सनातनी आवश्यकता रही थी, रही है और भविष्य में भी रहेगी। धन, वैभव, कीर्ति, भूमि, सोना, चाँदी, पद और प्रतिष्ठा यदि सांसारिक जीवन की समृद्धि का प्रतीक हैं, तो आध्यात्मिकता पारलौकिक जीवन की समृद्धि का प्रतीक है। सांसारिक साधन् बाह्य जीवन को उन्नत बनाते हैं, तो आध्यात्मिकता आन्तरिक जीवन (आत्मिक जीवन) को समृद्ध बनाती है। सांसारिक संसाधन संसार में साथ देते हैं लेकिन आध्यात्मिकता आत्मा का साथ (जन्म-जन्मांतर तक) देती है। इस प्रकार मैं कह सकता हूँ कि सांसारिक सुख सांसारिक संसाधनों से मिलता है और आत्मिक सुख आध्यात्मिकता से मिलता है। वेद और उपनिषद् की भाषा में कहूँ तो सांसारिक सुख के साधन आपूर्त और आत्मिक या आध्यात्मिक सुख इष्ट कहे जाते हैं। तभी तो हम भगवान से प्रार्थना करते हैं कि **"त्वमिष्टापूर्ते संसृजेथामयंञ्च"** अर्थात्- हे प्रभो आप और यह यज्ञाग्नि मेरे जीवन के दो मुख्य अङ्ग इष्ट और आपूर्त को सिद्ध करिए। उपनिषदों में भी इस विषय को कुछ इस तरह परिभाषित करने का प्रयास किया है **"अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते"** अर्थात् अविद्यया (सांसारिक ज्ञान अथवा कर्म) से मनुष्य सांसारिक मृत्यु (दुःख) से पार होकर विद्या (आध्यात्मिक ज्ञान) से अमृत की प्राप्ति करता है। अविद्या (सांसारिक ज्ञान व कर्म) आपूर्त की साधिका है तथा विद्या (आध्यात्मिक ज्ञान) अमृत (इष्ट) की साधिका है। इष्ट, आपूर्त, विद्या और अविद्या इन सबका ज्ञान तथा इनके अनुसार जीवन यापन जीवन की सर्वाङ्गीण सफलता और उन्नति का साधन अथवा कारण है।

मनुष्य के सामने इष्ट-आपूर्त और विद्या-अविद्या के सन्तुलन स्थापित करने की मजबूत चुनौती होती है। जिनकी साधना में दृढ़ता होती है, जिनके चिन्तन में पवित्रता होती है, जिनके जीवन में पुरुषार्थ की व्यापकता होती है और जिनके जीवन में लक्ष्य पर ध्यान केन्द्रित होता है वे इस चुनौती पर विजय हासिल करते हैं, जिनका जीवन उपरोक्त सिद्धान्तों के विपरीत होता है, वे इस जीवन की जंग में बुरी तरह पराजित होते हैं। प्रश्नों के चक्रव्यूह में मनुष्य इस प्रकार फंस जाता है, कि उसमें से उसे निकलने का कोई उपाय नहीं सूझता और उसकी दुःखद परिणति ठीक जैसी ही होती है जैसे कि पिछले महीने (१२ जून मंगलवार) आध्यात्मिक गुरु भय्यू जी जोशी (उदय सिंह देशमुख) की हुई। विद्या-अविद्या तथा इष्ट-आपूर्त को जाने बिना तथा इनके सन्तुलन स्थापित किए बिना जो आध्यात्मिकता को अपने ढंग से परिभाषित करते हैं ऐसे तथाकथित गुरुओं का हश्र ऐसा ही होता है, जैसा कि शनि धाम के संस्थापक दाती महाराज उर्फ मदन राजस्थानी का हुआ।

पाठक गण यह न समझें कि मैं भय्यू जी जोशी और दाती महाराज का कोई तुलनात्मक अध्ययन अथवा विश्लेषण कर रहा हूँ। ऐसा बिल्कुल भी नहीं है, अपितु मैं आध्यात्मिक गुरुओं की विडम्बना (त्रासदी) का स्वरूप अपने प्रबुद्ध पाठकों के समक्ष रखना चाहता हूँ। जितने तथाकथित आध्यात्मिक गुरु हुए हैं, उनमें से अधिकांश अपने कदाचार के कारण कारागार की हवा खा रहे हैं। यदि जाँच सही दिशा में निष्पक्षता से आगे बढ़ती रही, तो मेरे लेख के पूर्ण होने से पूर्व ही दाती महाराज उर्फ मदन राजस्थानी जेल की सलाखों के पीछे होगा। यह वही दाती महाराज है, जो विभिन्न टी.वी. चैनलों पर शनि के प्रकोप से बचने के लिए लोगों को उपदेश करता था। कथित गुरुकुल का भी सञ्चालन करता था, जिसमें भिन्न-भिन्न स्थानों से छात्र-छात्राएं अध्ययन करते

थे। जिसमें पढ़ने वाली एक छात्रा ने दाती महाराज पर यौन-शोषण का ससाक्ष्य (प्रमाण सहित) आरोप लगाया। जाँच टीम ने जब दाती महाराज के ठिकानों पर छापेमारी की, तो वहाँ से अन्वेषण दल ने आपत्तिजनक दस्तावेज बरामद किए लेकिन दाती महाराज गायब मिला। कोर्ट ने सख्त संज्ञान लिया, तो दाती महाराज खुद बेगुनाह होने की दुहाई देता रहा और कहा कि मेरा उक्त मामले से कुछ भी लेना-देना नहीं असली विवाद तो सचिन जैन और अभिषेक के बीच पैसों के लेन-देन को लेकर उत्पन्न हुआ झगड़ा है। मुझे अनावश्यक उनके विवाद में घसीटा जा रहा है और मुझे बदनाम करने के लिए तथा मेरे बढ़ते कदम को रोकने के लिए एक षड्यन्त्र के तहत फंसाया जा रहा है।

जिनके ऊपर समाज को आध्यात्मिक दिशा देने का बड़ा उत्तरदायित्व है, जिनका समाज के विकारों से मुक्त करने का दायित्व है, उनके ऊपर इस प्रकार के आरोप लगना यह दर्शाता है कि इन तथाकथित गुरुओं का नैतिक व चारित्रिक बल कितना दृढ़ है? धर्म और पूजा के नाम पर दाती महाराज के शनि धाम में शनि की मूर्ति पर चढ़ावे के रूप में आए कई क्विंटल सरसों के तेल को कितनी चतुराई से इकट्ठा करके बेचा जाता है यह भी कोई कम चौंकाने वाला नहीं है।

यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि जब भी इस प्रकार किसी तथाकथित गुरु पर आरोप लगते हैं, तो आरोपों का साहसपूर्वक, सत्यतापूर्वक सामना करने की अपेक्षा राजनीतिज्ञों की भांति पैंतरा लेते हुए बयान देते हैं कि यह मुझे बदनाम करने की तथा मेरी छवि को धूमिल करने की साजिश है। प्रश्न उठता है कि यदि आपकी आध्यात्मिक शक्ति प्रबल है, तो आप इन आरोपों का सामना करने से क्यों डरते हो? दाती महाराज उर्फ मदनलाल राजस्थानी ने अपने तथाकथित आध्यात्मिक केन्द्रों को अवान्छित गतिविधियों का केन्द्र क्यों बनने दिया? इसका उत्तर यही है कि ये महोदय प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से अवाञ्छित गतिविधियों का हिस्सा रहे हैं और उपरोक्त गतिविधियों में संलिप्त तत्वों को हवा देने का काम करते रहे हैं। दाती महाराज ने समाज में शनि का भय, शनि का प्रकोप, शनि की कृपा और शनि के महत्व को बड़े जोर-शोर से प्रचारित किया और प्रसारित किया लेकिन खुद दाती महाराज ने शनि के भय, प्रकोप, कृपा और उसकी महत्ता को कैसे ठेंगा दिखाया, यह उसके घृणित कारनामे ने सबके सामने साबित कर दिया। जब कभी किसी के साथ धर्म पर, आध्यात्मिकता पर, भक्ति पर और भगवान की पूजा पर चर्चा होती है, तो आज के आध्यात्मिक गुरुओं के आचरण के कारण कई महानुभाव प्रश्न करते हुए कहते हैं कि धर्मपाल जी क्या इन तथाकथित आध्यात्मिक गुरुओं के कारण समाज में आध्यात्मिकता के प्रति आई नकारात्मक तथा आलोचनात्मक धारा को आध्यात्मिकता की भक्ति की अथवा भगवान् की पूजा, व श्रद्धा की विडम्बना नहीं कहा जायेगा? मैंने उत्तर देते हुए कहा कि महोदय! आप अवश्य यह भूल कर रहे हैं क्योंकि तथाकथित गुरुओं का कदाचार, दुराचार आध्यात्मिकता की, भगवान के प्रति श्रद्धा अथवा भक्ति की विडम्बना नहीं है, अपितु उन आध्यात्मिक गुरुओं की विडम्बना है, जो स्वयं सत्य का, भक्ति का, आस्तिकता का, सदाचार का उपदेश करते-करते सत्य, अधर्म, अनाचार और पाप के रास्ते पर चल पड़ते हैं। विडम्बना उन उपदेष्टाओं की है, जिन्होंने आध्यात्मिकता को आध्यात्मिकता के लिए नहीं, अपितु उस (आध्यात्मिकता) को ढाल बनाकर तीनों एषणाओं (वितैषणा, पुत्रैषणा और लौकेषणा) की पूर्ति के लिए असंख्यों श्रद्धालुओं के साथ आध्यात्मिक विश्वासघात किया। इनका आध्यात्मिकता को धूमिल करने का कुत्सित प्रयास है।

आध्यात्मिक गुरु भय्यू जी जोशी (उदय सिंह देशमुख) का प्रकरण मेरे लिए आलोचना का नहीं, अपितु विनम्र समालोचना का विषय है। सर्वप्रथम मैं प्रभु से उनकी आत्मा की शान्ति की कामना करता हूँ। उनकी अस्वाभाविक और असामयिक मृत्यु ने सबको स्तब्ध किया है।

१२ जून मंगलवार को भय्यू जी ने अपनी बेटी कुहु

के कमरे में अपने लाईसेन्सी हथियार से खुद को गोली मार ली। मध्यप्रदेश सरकार से राज्य मन्त्री का दर्जा दिये जाने का प्रस्ताव मिला जिसे जोशी ने अस्वीकार कर दिया था। इससे सहज अनुमान लगाया जा सकता है कि भय्यू जी आध्यात्मिक क्षेत्र के साथ साथ राजनीतिक क्षेत्र में भी कितनी मजबूत पकड़ रखते थे। चाहे प्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्ता अन्ना हजारे के जन्तर-मन्तर पर किए अनशन को समाप्त करने का प्रकरण हो अथवा गुजरात के पूर्व मुख्यमंत्री के अनशन को समाप्त करने की बात हो, उपरोक्त दोनों ही प्रकरणों में भय्यू जी जोशी की मुख्य भूमिका रही थी। ऐसे व्यक्तित्व द्वारा आत्महत्या के अप्रत्याशित कदम उठाने का क्या कारण है? दूसरा प्रश्न वह कारण पारिवारिक है; सामाजिक है अथवा राजनीतिक है? उपरोक्त प्रश्न सामाजिक स्तर पर भी उठे और राजनीतिक स्तर पर भी। राजनीतिक दलों ने उनकी आत्महत्या की सी.बी.आई. जाँच की मांग की जबकि परिवार की ओर से इस प्रकार की जाँच की मांग का कोई बयान जारी नहीं हुआ। जांच दल ने जब घटना स्थल का निरीक्षण किया, तो वहाँ जाँच दल को एक पत्र मिला, जिसने आत्महत्या पर उठने वाले सवालों से रहस्य का पर्दा पूरी तरह से उठा दिया। यदि मैं भूल नहीं कर रहा हूँ तो शायद यह अब तक का पहला मामला ऐसा है, जब किसी आध्यात्मिक गुरु ने समस्या से निजात पाने के लिए आत्महत्या के विकल्प को चुना हो।

प्रबुद्ध पाठकगण! भय्यू जी जोशी द्वारा लिया गया आत्महत्या के फैसले का कारण न तो धार्मिक था, न सामाजिक था और न ही राजनैतिक था, अपितु उसका कारण पारिवारिक कलह था। मुझे अत्यन्त खेद के साथ लिखना पड़ रहा है कि भय्यू जी जोशी का प्रकरण भी मुझे स्पष्टतः आध्यात्मिक गुरु की विडम्बना ही नजर आ रहा है, जहाँ पत्नी और पुत्री के बीच छिड़ा पारिवारिक कलह भय्यू जी के लिए एक ऐसी अनसुलझी जटिल पहेली बन गया, जिसकी परिणति अन्त में आत्महत्या के रूप में हुई। महाभारतकार ने ठीक ही लिखा है

"ज्ञातयस्तास्तीन्तीह, ज्ञातय मज्जयन्ति च।
सुवृत्तास्तारयन्तीह च दुर्वृत्ताः मज्जयन्ति च।

अर्थात् इस संसार में प्राणी को सम्बन्धी ही तारते (पार लगाते) हैं और सम्बन्धी ही डुबाते हैं। अच्छे चरित्र वाले, आचरण वाले सम्बन्धियों से मनुष्य समस्याओं से पार हो जाता है और बुरे चरित्र और व्यवहार वाले सम्बन्धी मनुष्य को डुबो देते हैं। पारिवारिक कलह ने महाराजा दशरथ के प्राण ले लिए, पारिवारिक कलह ही श्रीकृष्ण की मृत्यु का कारण बना, पारिवारिक कलह ही कौरवों के अन्त का कारण बना और पारिवारिक कलह ही रेलूराम पूनिया (पूर्व विधायक) की सपरिवार मृत्यु का कारण बना। यद्यपि पारिवारिक कलह कोई सामान्य चुनौती नहीं कही जा सकती परन्तु आध्यात्मिक गुरु का इस प्रकार आत्महत्या जैसे अप्रत्याशित विकल्प को चुनना कहीं न कहीं आत्मिक तथा आन्तरिक निर्बलता को ही दर्शाता है, कहीं न कहीं आपकी पारिवारिक नेतृत्व अक्षमता को प्रकट करता है। वेद में स्पष्ट कहा है कि

"असूर्यानाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः।
तांस्ते प्रेत्यापि गच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः।

अर्थात् जो आत्म हनन (आत्महत्या) करने वाले होते हैं, वे उन योनियों को प्राप्त करते हैं जहाँ वेद ज्ञान रूपी सूर्य का प्रकाश नहीं जाता है।

आध्यात्मिक गुरुओं द्वारा आत्महत्या जैसे अप्रत्याशित कदम उठाने से समाज में अच्छा सन्देश नहीं जाता है। ऐसा नहीं है कि संसार में लोग आत्महत्या नहीं करते या नहीं करेंगे। लोग आत्महत्या पहले भी करते थे शायद भविष्य में भी करें लेकिन प्रश्न यह है कि क्या ऐसे व्यक्तित्व को, जिसकी छवि समाज में एक आध्यात्मिक गुरु की है, क्या ऐसे व्यक्तित्व के धनी को इस प्रकार का कदम उठाना चाहिए? यदि नहीं तो भय्यू जी जोशी ने इस अप्रत्याशित कदम को उठाने पूर्व क्यों नहीं एक बार सोचा कि

"असूर्या नाम ते लोकाः- अन्धेन तमसावृताः।
तांस्ते प्रेत्यपि गच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः।

❑❑

शब्द-प्रमाण

(उत्तरा नेरूर्कर, बंगलौर, मो.- 09845058310)

हाल ही में, एक संस्कृत प्रोफैसर का शास्त्र-विषयक वक्तव्य सुना। वे बहुत ही प्रसिद्ध हैं और सम्प्रति एक संस्कृत विश्वविद्यालय के वाइस-चान्सलर हैं। प्रमाणों के विषय में बताते हुए, उन्होंने कहा कि प्रत्यक्ष और अनुमान तो सिद्ध ही हैं, परन्तु शब्द प्रमाण के विषय में अनेकों शास्त्रों में संशय व्यक्त किया गया है, क्योंकि केवल शब्दों से कहे जाने से कोई पदार्थ सही कैसे माना जा सकता है। उन्होंने स्वयं अपना संशय इस विषय में व्यक्त किया और इस प्रमाण को सन्दिग्ध प्रमाण की श्रेणी में डाल दिया। यदि गौतम प्रभृति ऋषियों ने इसको प्रमाण घोषित न किया होता, तो वे सम्भवतः इसको सीधा-सीधा नकार देते। इस वचन से क्षुब्ध होकर, इस प्रमाण के विषय में मैं यह लेख लिख रही हूँ। अवश्य ही मेरे विचार उन तक इस लेख के माध्यम से नहीं पहुँच रहे हैं, परन्तु आशा है कि जिन पाठकों के मन में इस प्रमाण के विषय में संशय है, उसे मैं दूर कर पाऊंगी। क्या पता, कभी आचार्यों के कानों तक भी मेरे शब्द पहुंच जायें, और वे नए ग्रन्थों में प्रकट नए संशयों से ऊपर उठकर, प्राचीन ऋषियों के मत को समझ पायें...

यह सत्य है कि कोई व्यक्ति सच भी बोल सकता है और झूठ भी। इसीलिए हमें यह संशय होता है कि कैसे किसी के वचन को प्रामाणिक मानें। और यदि हमको वचन को प्रमाणित करना पड़ा, तो फिर वह वचन स्वयं प्रमाण नहीं माना जा सकता। यह सन्देह अवश्य ही स्वाभाविक है, परन्तु ऋषियों ने अपने ग्रन्थों में इसका उत्तर दे रखा है। पहले देखते हैं कि प्रमाणों के विषय के सबसे बड़े ज्ञाता, न्यायदर्शन के प्रणेता गौतम मुनि इस विषय में क्या कहते हैं-

आप्तोपदेशः शब्दः। स द्विविधो दृष्टादृष्टार्थत्वात्।। न्यायदर्शन १/१/७, ८।।

अर्थात् आप्त = जो व्यक्ति किसी विषय का जाना-माना ज्ञाता हो, और जो किसी बाह्य प्रभाव से अपने मत को झुठला नहीं सकता, ऐसे आप्त पुरुष के वचन प्रामाणिक होते हैं। और ये वचन दो प्रकार के होते हैं- दृष्ट विषयों से सम्बद्ध और अदृष्ट विषयों से सम्बद्ध।

पतञ्जलि ने भी यही परिभाषा स्वीकृत की है- **आप्तोपदेशः शब्दः।।** योगदर्शन १/१/७।। कपिल ने भी यही शब्द दोहराए हैं- **आप्तोपदेशः शब्दः।।** साङ्ख्यदर्शन १/६६।। वैशेषिक, पूर्वमीमांसा और उत्तरमीमांसा वेदवचन को प्रमाणित मानने के प्रसंग में शब्द प्रमाण को उपादेय स्वीकार करते हैं- **तस्मादागमिकः** (वैशेषिक ३/२/८), **औत्पत्तिकस्तु शब्दस्यार्थेन सम्बन्धः. .. तत्प्रमाणं बादरायणस्यानपेक्षत्वात्।।** पूर्वमीमांसा १/१/५।।, **सर्वत्र प्रसिद्धोपदेशात्।।**

उत्तरमीमांसा।। १/२/१।।

इस प्रकार छःओं दर्शनों ने शब्द प्रमाण को स्वीकारा है। अब संशय कहाँ उत्पन्न हुआ? सो, उनके व्याख्याकारों में ज्ञान की कमी के कारण इस प्रकार के संशय उत्तरकाल में हुए। आजकल, आर्यसमाज को छोड़, अन्य संस्थाओं द्वारा पढ़ाए गए पाठ्यक्रमों में इन उत्तरकालीन ग्रन्थों को ही पढ़ाया जाता है, क्योंकि वे अधिक बुद्धिगम्य हैं। उनके आधार ऋषि-प्रणीत सूत्र-ग्रन्थ, अपने संक्षेपीकरण के कारण, निश्चय ही समझने में अधिक कठिन होते हैं। स्वामी दयानन्द ने तो स्वामी विरजानन्द से मुख्य रूप से यही सीख पाई थी कि ऋषि-प्रणीत ग्रन्थों को ही पढ़ना चाहिए। इसलिए आर्यसमाजी प्रायः ऋषियों के बताए ग्रन्थों का अनुशीलन करते हैं। परन्तु अन्यत्र इसका पालन न करने का भारी दुष्प्रभाव हम ऊपर दिए प्रस्तवना में दिए दृष्टान्त से समझ सकते हैं।

तो फिर हम शब्द प्रमाण को झूठ/गलती से कैसे

अलग करें? इसका रहस्य 'आप्त' शब्द में निहित है। आप्त विद्वान् वह होता है, जिसने अपने विषय को निस्संशय जाना है- प्राप्त कर लिया है, और **जो लौकिक प्रलोभनों के परे हैं**। साथ-साथ उसे अपना ज्ञान बांटने की इच्छा भी होनी चाहिए। इसीलिए कहा गया है-

"... **पुनर्ददताघ्नता जानता संगमेमहि** (ऋग्वेद ५/५१/१५)" अर्थात् (जानता) जानने वाले, (ददता) देने वाले, अर्थात् अपनी विद्या देने की इच्छा रखने वाले, और (अघ्नता) विद्या का हनन न करने वाले का हम संग करें, उसकी बात को प्रमाण मानें। इस प्रकार वेद सुन्दरता से हमें शब्द प्रमाण किसका वचन होता है, इसका उपदेश देता है।

आजकल हम देखते हैं कि निजी कम्पनियाँ, संवेदनशील विषयों पर, जो उनके व्यापार के लिए कठिनाई उत्पन्न कर सकते हैं, स्वयं अनुसन्धान प्रयोगशालाएं स्थापित कर देते हैं। अब, उनमें कार्यरत वैज्ञानिक किस निष्कर्ष पर पहुँचेगें, यह सब कोई समझ सकता है। जर्मन मोटर कम्पनी, फोल्कस्वैगन, का हाल ही में ऐसा एक खुलासा हुआ, जहाँ वैज्ञानिकों ने डीज़ल मोटरों से होने वाले प्रदूषण को नकारा, जबकि उनके प्रयोग कुछ और ही कह रहे थे। अर्थात् वे वैज्ञानिक अपने विषय में पारंगत होते हुए भी आप्त नहीं थे क्योंकि वित्तैषणा ने उनको धर दबाया और उन्होंने अपनी खोजों को झुठला दिया।

एक और संशय यह किया जाता है कि पाश्चात्य अनुसन्धान-प्रकार में केवल प्रत्यक्ष (experiments) और अनुमान (reasoning) से जो सिद्ध होता है, उसी को प्रामाणिक माना जाता है; शब्द प्रमाण जैसा कोई प्रमाण नहीं माना गया है। परन्तु यहाँ समझने में एक दोष है! जब आइन्स्टाइन् ने अपनी Theory of Relativity प्रतिपादित की, जो कि केवल अनुमान प्रमाण पर आधारित थी, तब कई वैज्ञानिकों ने उस पर शंका की। परन्तु जब कुछ प्रत्यक्ष प्रमाण उपलब्ध हुए, तो कुछ वैज्ञानिकों ने परिणामों को समझकर उसका अनुमोदन किया। तभी सब वैज्ञानिकों ने, और फिर समस्त संसार ने उसको माना। परन्तु सभी वैज्ञानिकों ने स्वयं वे तथ्य नहीं परखे- परखे तो अन्यों ने, परन्तु उनकी बताई बात को सबने माना। तब प्रश्न उठता है कि किस प्रमाण से उन्होंने यह बात मानी? संशोधक वैज्ञानिकों ने तो अपनी खोज शोधपत्र में लिख दी, परन्तु वह झूठी भी हो सकती थी। तो उस तथ्य को क्या प्रत्येक वैज्ञानिक को परख कर ही मानना पड़ेगा? जब इसका उत्तर "नहीं" आए, तो इसका अर्थ है कि शब्द प्रमाण को भी मान लिया गया!

वस्तुतः, ज्ञान आगे ही नहीं बढ़ सकता, यदि हम शब्द प्रमाण को नकार दें। जो बच्चा अपनी माता से बोलना सीखता है- वह वस्तु दिखाती है और उसका नाम बोलती है- वहीं से हमारी शब्द प्रमाण की यात्रा निकल पड़ती है, क्योंकि हम तब भी पूछ सकते हैं कि इसमें क्या प्रमाण है कि इस जन्तु का नाम 'गधा' है? इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं है। अनन्तर जब अन्य लोग हमारे कहे को समझ जाते हैं, और स्वयं भी वही प्रयोग करते हैं, तब हमारा विश्वास सुदृढ़ हो जाता है कि हमारी मां ने हमें सही बताया (यदि हमारे मन में तब तक कुछ संशय शेष था!)। इस प्रकार शब्द प्रमाण सारे ज्ञान का, सभी सूचनाओं (communication) का आधार होता है। मनुष्य तो क्या, प्राणियों को भी थोड़ी भाषा बनानी पड़ती है जिससे कि वे एक-दूसरे को सूचित कर सकें, अपना ज्ञान बांट सकें। मनुष्यों में जो इतना अधिक ज्ञान पाया जाता है, उसमें एक मुख्य कारण यही है कि हम शब्द से, भाषा से, दूसरे व्यक्ति के साथ अपना ज्ञान बांट सकते हैं। फिर वह व्यक्ति, यदि चाहे तो, उसे और आगे बढ़ा सकता है। इस प्रकार छोटे से लेकर बड़े-से-बड़े ज्ञान का आधार शब्द प्रमाण ही है, इसमें किसी को भी संशय नहीं करना चाहिए।

भारत के प्राचीन ऋषियों ने इस तथ्य को सम्पूर्णतया समझा। किस प्रकार शब्द से हमारे मस्तिष्क में ज्ञान उत्पन्न होता है, इस विषय पर उन्होंने बहुत ऊहा की, जो कि विज्ञान आज जनमानस में उपलब्ध नहीं है। उस विषय पर कुछ दर्शनग्रन्थों से उद्धरण दे रही हूँ, जिससे

कि उनकी सोच पुनः उज्जीवित हो सके।

न्यायदर्शन बताता है-

आप्तोपदेशसामर्थ्याच्छब्दादर्थसम्प्रत्ययः।।

न्यायदर्शन २/१/५३।।

अर्थात् आप्त जनों के उपदेश में इतना सामर्थ्य होता है कि कहे शब्द के अर्थ की प्रतीति श्रोता को हो जाती है। इसमें सम्भवतः किसी अलौकिक शक्ति का वर्णन नहीं है, जैसा कि नवीन व्याख्याओं में कहा गया है, अपितु यह बताया गया है कि आप्तजन अपने विषय को इतनी भली प्रकार जानते हैं कि उनका उपदेश सरल और सुव्यवस्थित होता है। स्वामी दयानन्द के उपदेशों में यह बात विपुलता से दृष्टिगोचर होती है- जहाँ उनके साम्प्रतिक पण्डित और शास्त्री क्लिष्ट भाषा व क्लिष्टतर उदाहरणों का प्रयोग करते थे, जिसके कारण साधारण जनता शास्त्रों से विमुख हो चुकी थी, वहीं स्वामी जी ने कठिन-से-कठिन शास्त्र को सब के लिए खोल के रख दिया।

आगे चलकर इसी प्रकरण में पूर्वपक्षी वही सब आशंकाएं उठाता है जो कि मैंने पूर्व में रखी थीं-

तदप्रामाण्यमनृतव्याघातपुनरुक्तदोषेभ्यः।। न्याय. २/ /५८।।

अर्थात् शब्द प्रमाण अप्रामाणिक है क्योंकि उसमें झूठ, परस्पर विरोध और पुनरुक्ति के दोष होते हैं।

सिद्धान्ती एक-एक करके उत्तर देते हैं-

न, कर्मकर्तृसाधनवैगुण्यात्।।

न्यायदर्शन २/१/५६।।

अर्थात् जो बात प्रामाणिक है, उसके करने में या उसके कर्ता में अथवा करने के साधन में यदि कोई दोष हुआ, तो वह गलत हो जाती है। इसमें शब्द का कोई दोष नहीं हैं। जैसे ऊपर दिए आइन्सटाइन् के उदाहरण में, यदि उसकी कही बात को प्रमाणित करने वाले गलत प्रकार से माप लेते, अथवा स्वयं विषय के बारे में कम जानते अथवा उनके साधन दोषपूर्ण होते, तो वे आइन्सटाइन् सही नहीं कह रहा, इस निष्कर्ष पर पहुँचते। वास्तव में, क़मी आप्त-वचन की नहीं, अपितु उनके प्रयोग की होती।

अभ्युपेत्य कालभेदे दोषवचनात्।।

न्यायदर्शन २/१/६०।।

दूसरे, वचन-व्याघात इस परिस्थिति में उत्पन्न हो सकता है, जब वचन मान कर, फिर सही समय पर क्रिया को न करने पर, वचन के क्रियान्वन में दोष आता है। जैसे आइन्स्टाइन् के वचन का सूर्यग्रहण के समय परीक्षण आवश्यक था। अब यदि सूर्यग्रहण को छोड़ कर किसी अन्य समय पर प्रयोग किया जाए, तो वह वचन को सिद्ध करने में असमर्थ ही होगा। मेरे अनुसार, यहाँ यह समझ लेना चाहिए कि प्रयोग के अन्य दोषों के कारण भी विरोध पाया जा सकता है, केवल कालभेद ही नहीं।

अनुवादोपपत्तेश्च।। न्यायदर्शन २/१/६१।।

तीसरे, पुनरुक्ति का दोष इसलिए नहीं होता क्योंकि वचन की आवृत्ति अनुवाद के लिए होती है, अर्थात् सकारण होती है, निरर्थक नहीं। जैसे, आइन्सटाइन् ने एक समीकरण को दूसरे स्थान पर इसलिए पुनः कहा क्योंकि वहाँ पर उनको उससे एक अन्य सिद्धान्त उपपादित करना था।

इस प्रकार, जहाँ ये दोष साधारण मनुष्यों के वचनों में अवश्य पाए जा सकते हैं, आप्त वचनों में ये दोष नहीं होते। इसीलिए वे सर्वमान्य होते हैं।

साङ्ख्य वचन के सामर्थ्य पर प्रकाश डालता है-

वाच्यवाचकभावः सम्बन्धः शब्दार्थयोः।। त्रिभिः सम्बन्धसिद्धिः।। न कार्ये नियम उभयथा दर्शनात्।। साङ्ख्यदर्शन ५/३७-३६।।

अर्थात् शब्द और अर्थ में जो सम्बन्ध है, वह वाच्य और वाचक का है- इन्द्रिय से ग्रहण होने वाला पदार्थ वाच्य है और उसको कहने वाला, उसका ज्ञान कराने वाला शब्द उसका वाचक है। तीन प्रकार से (बुद्धि में) यह सम्बन्ध सिद्ध होता है- प्रत्यक्ष, अनुमान और उपमान से। यथा- "देखो, यह कुत्ता है" इस प्रत्यक्षीकरण से शब्द का अर्थ से सम्बन्ध स्थापित किया गया। फिर, "कुत्ते के काटने से मनुष्य मर भी सकता है"- यहाँ जो

विद्या अनुमान से प्राप्त हुई, उसे सूचित किया जा रहा है। "भेड़िया कुत्ते के समान होता है"- इस उपमान प्रमाण से नए शब्द और अर्थ का ज्ञान हमें प्राप्त हो रहा है। इस प्रकार, शब्द केवल कार्य प्रकृति ही नहीं, अपितु कारणों को भी वर्णित करने में सक्षम है। वस्तुतः, उपरिलिखित न्यायदर्शन १/१/८ सूत्र में दृष्ट का अर्थ 'कार्य' और अदृष्ट का 'कारण' से ही अर्थ है। वस्तुओं, क्रियाओं, घटनाओं के हेतु अधिकतर अदृश्य होते हैं।

पूर्वमीमांसा में शब्द प्रमाण के विषय में एक और महत्वपूर्ण तथ्य पाते हैं-

औत्पत्तिकस्तु शब्दस्यार्थेन सम्बन्धस्तस्य ज्ञानमुपदेशोऽव्यतिरेकश्चार्थेऽनुपलब्धे तत्प्रमाणं बादरायणस्यानपेक्षत्वात्।। पूर्वमीमांसा १/१/५।।

अर्थात् शब्द और उसके अर्थ का सम्बन्ध औत्पत्तिक है- उत्पन्न कराने वाला है। उसका उपदेश संशयरहित ज्ञान की उत्पत्ति करता है। अर्थ = वाच्य के न उपलब्ध होने पर भी वह प्रमाण होता है क्योंकि, बादरायण मुनि के अनुसार, वह किसी वस्तु की अपेक्षा नहीं रखता।

यह शब्द प्रमाण की अद्भुत शक्ति है कि, जब अर्थ सामने नहीं भी होता या कभी देखा भी नहीं हुआ होता, तब भी वह उसके विषय में ज्ञान उपलब्ध कराता है। यथा- किसी ने परमाणु नहीं देखा है, परन्तु हम उसके विषय में बहुत कुछ आदान-प्रदान कर लेते हैं, उसका ज्ञान बच्चों में उत्पन्न कर देते हैं। बिना शब्द प्रमाण के यह सम्भव नहीं है।

पुनः यहाँ ध्यान देने की बात है कि, जैसे सब प्रत्यक्ष किया हुआ प्रमाण नहीं होता, क्योंकि वह संशययुक्त हो सकता है, इसी प्रकार सभी बातें शब्द प्रमाण नहीं होतीं- केवल संशयरहित उपदेश ही शब्द प्रमाण की श्रेणी में आयेगा। इस बात को भूल कर ही हम शब्द प्रमाण में संशय करने लगते हैं। हम भूल जाते हैं कि प्रत्यक्ष देखा हुआ भी व्यभिचारी= भ्रमयुक्त (जैसे मृगतृष्णा) या अव्यवसयात्मक = अनिश्चित (जैसे कोहरे में आकृति) हो सकता है (**इन्द्रियार्थसन्निकर्षोत्पन्नं ज्ञानमव्यपदेश्यम-व्यभिचारि व्यवसायात्मकं प्रत्यक्षम्।।** न्याय० १/१/४।।), और अनुमान करते समय भी हम गलती कर सकते हैं। अर्थात्, सभी प्रमाण अप्रामाणिक हो सकते हैं यदि उनकी प्रामाणिकता बनाए रखने के लिए कुछ आवश्यकताओं को पूर्ण न किया जाए। शब्द प्रमाण भी ऐसा ही एक प्रमाण है।

पूर्वमीमांसा तो यहाँ तक कहता है कि धर्म प्रत्यक्ष प्रमाण से सिद्ध नहीं हो सकता क्योंकि वह इन्द्रियों का विषय नहीं है-...

तत्प्रत्यक्षमनिमित्तं विद्यमानोपलम्भनत्वात्।।

१/१/४।।

यह तो स्पष्ट ही है कि परोपकार करने से हमें भविष्य में सुख प्राप्त होगा, यह कहाँ प्रत्यक्ष है?! अनुमान से भी हम इस निष्कर्ष पर कभी नहीं पहुँच सकते। सो वेद का स्वतः शब्द प्रमाण, अर्थात् जिसको किसी और वचन से अनुमोदन की आवश्यकता नहीं है, ने सम्पूर्ण विश्व में धर्म का ज्ञान उत्पन्न किया और मनुष्य के स्वार्थी पशुवत् स्वभाव को परिणत किया। उसने अदृष्ट धर्म की परिकल्पना मस्तिष्क में उत्पन्न की, उसके फल, उसके लिए कर्म, सब का मनुष्यमात्र के लिए वर्णन किया।

इस प्रकार हम पाते हैं कि शब्द प्रमाण एक बहुत ही शक्तिशाली प्रमाण है। जबकि अधिकतर लोग इसको समझ नहीं पाते, तथापि वे प्रतिदिन इसका अनेक बार प्रयोग करते हैं। जिस प्रकार मनोहर ने जब उत्पला से कहा, "मैंने आज उद्यान में सुन्दर पक्षी देखा" और उत्पला उसको मानती है, तब यह मनोहर के लिए प्रत्यक्ष प्रमाण है, परन्तु उत्पला के लिए शब्द प्रमाण है! ऐसा नहीं समझना चाहिए कि केवल शास्त्रों में ही प्रमाणों का प्रयोग होता है। हम अपने दैनन्दिन जीवन में प्रमाण द्वारा ही ज्ञान/सूचना उपलब्ध करते और देते हैं। और शब्द प्रमाण के बिना तो संसार का व्यवहार और मनुष्यों का ज्ञान कभी आगे ही न बढ़ पाए। इसको स्वतन्त्र प्रमाण के रूप में स्वीकार न करने से हम इससे पूर्णतया लाभ नहीं उठा पाते। तथापि, मानें-न-मानें, हम इसके बिना जीवन तो नहीं जी सकते! ❑❑

इतिहासकार की कलाकारी (1)

(राजेशार्य आट्टा, मो0- 09991291318)

प्रिय पाठकवृन्द! वर्तमान में देश ऐसी अवस्था में पहुँच गया है कि यहाँ स्वयं घोषित बौद्ध अपने तथाकथित दलित आरक्षण को बचाने के लिए देश की सम्पत्ति जला देते हैं और हिन्दू विद्वेषी पेरियार का अनुकरण करते हुए राम-हनुमान की मूर्तियाँ जला देते हैं, फिर भी न्यायालय में सरकार को उनके पक्ष में खड़ा होना पड़ा। यहाँ 'पाकिस्तान जिन्दाबाद' के नारे लगाने वालों को देश के 'बड़े' नेता हाथों हाथ उठा लेते हैं और उन्हें देश भर में राजनैतिक मंचों से बुलवाया जाता है, जबकि तिरंगा फहराने के 'अपराध' में जो देशभक्त युवक पुलिस व जिहादियों की लाठी-गोली के शिकार हो जाते हैं, देश की जनता को उनके नाम से भी अनजान रखा जाता है। फिर ऐसे वातावरण में जिन्ना को देशभक्त और वीर सावरकर को कायर व गद्दार कहा जाए, तो आश्चर्य ही क्या है? सत्ता की छाया में वर्षों से देश में यही तो होता रहा है।

प्रसंग तो भारत के विश्वविद्यालय से भारत के टुकड़े करने वाले जिन्ना की तस्वीर हटाने का था, जीवन भर भारत के लिए सर्वस्व समर्पण करने वाले सावरकर को बीच में घसीटने की क्या आवश्यकता थी? माना कि जिन्ना प्रारम्भ में राष्ट्रवादी थे और गाँधी जी के नेहरू पक्षपात के कारण कांग्रेस में अपनी महत्वाकांक्षा पूरी न होते देख अलगाववादी बन गये थे। फिर अपनी महत्वाकांक्षा को पूरा करने के लिए अंग्रेजों का समर्थन पाकर उसी जिन्ना ने लाखों हिन्दुओं को कत्ल करवाया।

ज़रा बताइये, कई वर्ष मालिक की खूब सेवा करने वाला नौकर यदि एक दिन उसकी चोरी व हत्या करके भाग जाए, तो उसे वीरता पुरस्कार दिया जाये या जेल में डाला जाये? स्वतंत्रता के बाद जिन्ना पाकिस्तान का राष्ट्रपति बना और भारत के प्रधानमंत्री की गद्दी पर बैठने वालों ने सावरकर को स्वतंत्रता सेनानी होने की पेंशन भी नहीं दी, उल्टे गाँधी-हत्या का आरोपी बनाकर १३ मास जेल में रखा व जीवन भर राजनीति से दूर रखने की योजना बनाई। फिर सावरकर से तकलीफ क्यों है? आज कथित बुद्धिमान लोग आरोप लगाते हैं कि सावरकर ने अंग्रेजों से माफी मांगी थी। फिर अंग्रेजों ने उन्हें लगभग १४ वर्ष जेल व १५ वर्ष नजरबंदी में क्यों रखा? गाँधी, नेहरू, जिन्ना, अम्बेडकर आदि की तरह उनसे मित्रता व समझौते क्यों नहीं किये? अभी तो देश में जिन्ना द्वारा करवाए गए अत्याचारों को देखने व झेलने वाले व्यक्ति जीवित हैं, फिर भी उसे भारत-भक्त के रूप में प्रचारित किया जाने लगा है, तो सोचिये, मजहब-परस्ती व तुष्टीकरण के लिए बहुत अतीत में हुए गजनवी, गोरी, बाबर आदि आक्रमणकारियों के विषय में क्या-क्या फेर-बदल किया गया होगा। इतिहासकारों की करामात देखिये-

इतिहासकार असगर अली इञ्जीनियर द्वारा ऑल बंगाल कम्यूनल हारमोनी कमेटी के वर्कशॉप में दिये भाषण को दिशा सांस्कृतिक मंच के पत्र 'अभियान' ने छापा था। उसके आरम्भ में इतिहासकार ने हिन्दुत्ववादी संस्थाओं पर आरोप लगाया है कि उन्होंने मुस्लिम शासकों को हिन्दू मन्दिर तोड़ने वाले व हिन्दुओं की हत्या करने वाले प्रचारित किया है। १६वीं सदी से पहले तक मुसलमान इस देश में एक छोटी सी अल्पसंख्यक जमात थी (१५%)। यह १६वीं सदी में लगभग २५% भी नहीं थी। इतनी कम जनसंख्या के शासक, जिनकी फौज में अधिकतर राजपूत थे, मन्दिर कैसे तोड़ते चले गए?

बगावत क्यों नहीं हुई?"

समीक्षा- कोई भी कार्य कितना भी अच्छा हो, पर यदि उसमें स्वार्थ की राजनीति का विषय घुल जाए, तो उससे बुरा कुछ नहीं होगा। ऐसा करने वाला चाहे कोई भी हो, बुरा ही कहलाएगा। पर यदि मुस्लिम शासकों द्वारा मन्दिर तोड़ने की पुष्टि मुस्लिम लेखकों के लेख भी करते हैं, तो इसे प्रचारित कर समाज में विद्वेष फैलाने का आरोप हिन्दुओं पर न लगाया जाए। यदि १६वीं शताब्दी तक भारत में मुस्लिम १५% थे, तो एक ही शताब्दी में २५% तक कैसे हो गये? ठीक है कि जब मुसलमान भारत आये, तब वे अल्पसंख्यक थे, पर आज भारत के अधिकतर मुसलमानों के गौत्र हिन्दुओं से मिलते हैं, तुर्कों या अरबों से नहीं। इससे यह बात सिद्ध होती है कि इनके पूर्वज भारतीय ही थे, जिन्हें हिन्दू से मुसलमान बनाया गया था। इसमें जहाँ हिन्दुओं की मूर्खता (मुस्लिमों द्वारा पकड़े गये व्यक्ति को पतित मानकर उसकी शुद्धि न करना, कुछ हिन्दुओं का सूफियों के मिथ्या चमत्कारों से प्रभावित होकर मुसलमान बनना) कारण थी, वहाँ मुस्लिम शासकों के अत्याचारों से भी मना नहीं किया जा सकता। क्योंकि वीर हेमू, हेमू के पिता, गुरु अर्जुनदेव, गुरु तेग बहादुर, गोकुला, शम्भाजी, गुरु गोविन्द के बच्चे, हकीकत राय, जुझारसिंह के बेटे उदयभानु और श्यामदेव आदि भी जिन्दा रह सकते थे, यदि उन्होंने इस्लाम स्वीकार किया होता। इतिहास इस बात का साक्षी दे रहा है। देखिये-

१. महमूद गजनवी पंजाब के राजा आनन्दपाल के बेटे सुखपाल को बन्धक बनाकर गजनी ले गया और उसे जबरदस्ती मुसलमान बनाया था। मुल्तान में रहते हुए उसने अवसर पाकर इस्लाम त्याग दिया, तो महमूद ने उस पर आक्रमण कर जीवन भर के लिए कैद में डाल दिया।

२. अल-बिरूनी ने लिखा है कि जब काबुल पर मुसलमानों की विजय हुई और काबुल के इस्पाहाबाद ने इस्लाम धर्म स्वीकार किया, तो उसने यह शर्त रखी कि न उसे गो-मांस खाने पर बाध्य किया जाए और न ही समलैंगिक मैथुन के लिए। (नूर नवी अब्बासी, पृ. २३२)

३. इब्नबतूता ने लिखा है कि बहाउद्दीन गस्तास्प गयासउद्दीन तुगलक का भानजा था। उसकी मृत्यु के बाद इसने मुहम्मद (तुगलक) की राजभक्ति की शपथ लेने से इन्कार कर दिया। मुहम्मद ने इसके पीछे सेना भेजी, तो यह कम्पिला (मद्रास) के हिन्दू राजा राय के पास चला गया। सब सामग्री समाप्त होने के बाद राय की स्त्रियाँ अग्नि में कूद गईं और राय लड़कर मर गया। राजा के ग्यारह पुत्र पकड़ लिए गये। इन्हें मुसलमान बना लिया गया। (पृ. ११२)

४. वीर सिंह बुन्देले के बेटे जुझारसिंह ने शाहजहाँ के विरुद्ध विद्रोह किया, तो जुझारसिंह के लड़के, पोते और उसके महल की कुछ स्त्रियाँ, जिनमें महारानी पार्वती भी थी, कैद की हुई थी। शाहजहाँ ने विद्रोही के लड़के दुर्गवाहन और पौत्र दुर्जनशाल को मुसलमान बनाने का आदेश देते हुए एक का नाम इस्लाम कुली तथा दूसरे का नाम अली कुली रखा। विशेष घायल रानी पार्वती को छोड़कर शेष स्त्रियों को शाही महल में भिजवा दिया गया। इसके अतिरिक्त जुझारसिंह के दो लड़के उदयभानु और श्यामदेव गोलकुण्डा से भागते पकड़े गये थे। ये दोनों ही लड़के अभी छोटे थे, इसलिये बादशाह ने कहा- तुम्हें दो में से एक का आनन्द लेना है- इस्लाम या मृत्यु।

लाहौरी लिखता है कि ये लड़के अपने बाप से कतई कम नहीं थे। इन्होंने जीने की बजाय मृत्यु को पसन्द किया, किन्तु इस्लाम धर्म नहीं स्वीकारा। बाद में इन दोनों राजकुमारों की हत्या कर दी गई। (बादशाहनामा पृ.४०)

५. औरंगजेबनामा में लिखा है कि तबसिम क्षेत्र के विद्रोहियों का प्रमुख संचालक गोकला जाट बंदी बना लिया गया। हुसैन अली खान ने उसे एवं उसके साथी उदयसिंह को शेखरजी के साथ शाही दरबार में भेज

दिया। सम्राट औरंगजेब की आज्ञानुसार उन दोनों को कोतवाली चबुतरे पर मौत के घाट उतार दिया गया। उनके शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर दिये गये। शिक्षा-दीक्षा हेतु गोकलाजाट के पुत्र एवं पुत्री को संरक्षक जवाहर खाँ को सौंप दिया गया (मुसलमान बना दिया गया)। पुत्री का विवाह शाहकुली के शिष्य से कर दिया गया जबकि पुत्र ने सम्पूर्ण कुरान कण्ठस्थ करके 'हाफिज' का स्थान प्राप्त किया। उसका नाम 'फाजिल' रखा।

जब लेखक कहता है कि १९वीं शताब्दी में भारत के मुसलमानों की संख्या १५% से २५% हो गई, तो हमारा संदेह विश्वास में बदल जाता है कि इसका कारण टीपू सुल्तान द्वारा जबरदस्ती धर्मान्तरण के लिए हिन्दुओं पर किये गये अत्याचार भी हो सकते हैं। डॉ. विवेक आर्य ने ब्रिटिश कमीशन रिपोर्ट के आधार पर लिखे डॉ. गंगाधरन आदि के लेख को उद्धृत करते हुए लिखा है कि जेमोरियन राजा के परिवार के सदस्यों को और अनेक नायर हिन्दुओं को टीपू सुल्तान ने जबरदस्ती सुन्नत कर मुसलमान बना दिया और उन्हें गौमांस खाने के लिए मजबूर भी किया गया। टीपू सुल्तान ने जब बिद्रुर (उत्तर कर्नाटक) के शासक अयाज खान (जिसे हैदी अली ने मुसलमान बनाया था) पर आक्रमण किया, तो वह बम्बई भाग गया। टीपू ने वहाँ कीं सारी जनता को इस्लाम कबूल करने पर मजबूर कर दिया।

कुर्ग में टीपू ने लगभग १०००० हिन्दुओं को जबरदस्ती इस्लाम में परिवर्तित किया। विलियम किर्कपत्रिक द्वारा १८११ ई० में प्रकाशित पत्रों में १९ जनवरी १७९० को टीपू ने जुमन खान को लिखा कि मालाबाद में ४ लाख हिन्दुओं पर हमला कर उसे भी इस्लाम में शामिल करने का निश्चय किया है। १८ जननवरी को सैयद अब्दुल दुलाई को लिखा कि अल्लाह की रहमत से कालिकट के सभी हिन्दुओं को इस्लाम में शामिल कर लिया गया है, कुछ हिन्दू कोचीन भाग गए हैं, उन्हें भी कर लिया जायेगा।

१९२१ ई० में खिलाफत आन्दोलन की असफलता का गुस्सा उतारने के लिए मालाबार के मोपलों (मुसलमानों) ने हिन्दुओं का कत्लेआम व धर्म परिवर्तन किया। तब महात्मा हंसराज के नेतृत्व में आर्य समाज ने पीड़ितों की सहायता की। उसका वर्णन 'मालाबाद और आर्यसमाज' पुस्तक में छपा है। उसमें यह भी लिखा है- अन्तिम हैदर और सुल्तान टीपू का समय भी आ पहुँचा। इन दोनों ने मालाबाद में राज्य स्थापित करना चाहा और लोगों को भयभीत करने के लिए घोर से घोर अत्याचार किये। सुल्तान टीपू के अत्याचारों के विषय में, जो उसने मालाबाद के भीतर सन् १७९० ईसवी में किये, कहा जाता है कि:-

"मालाबारी लोगों के साथ उसका व्यवहार महा पैशाचिक था, कालीकट में माताओं को फांसी पर लटकाया गया, बच्चों की गर्दनें मरोड़ी गईं, ईसाई और हिन्दुओं को नग्न करके हाथी के पांव के साथ बांध कर उनके टुकड़े-टुकड़े कर दिये गये, समस्त गिरजे और मन्दिर उसने नष्ट कर दिये, और स्त्रियों को जबरदस्ती यवनों को सौंप दिया।" उस समय मन्दिर, मस्जिद बनाए गए, और इस समय भी इस प्रकार की मस्जिदें दिखाई देती हैं जो पहले मन्दिर थे। (पृ० १९)

लेखक के इस तर्क में कोई दम नहीं है कि अल्पसंख्यक मन्दिर कैसे तुड़वाते। हमारे सामने दो रियासतों का ताजा उदाहरण है, जिनके राजा मुस्लिम थे और प्रजा हिन्दू बहुल थी- हैदराबाद दक्षिण और लुहारू (हिसार)। फिर भी इन नवाबों ने जनता पर इतने अत्याचार किये कि हिन्दुओं को उनके विरुद्ध सत्याग्रह करने पड़े। हैदराबाद को स्वतंत्रता के बाद जिस तरह पुलिस सेना की सहायता से भारत में मिलाया, उसे सारा संसार जानता है।

सेना में हिन्दू सौनिक होते हुए भी मुस्लिम शासकों ने मन्दिर कैसे तोड़े, इसका कारण था स्वार्थी हिन्दुओं का क्रूरता को सहयोग। जैसे- पाकिस्तान को हर युद्ध में परास्त करके भी भारत अपने अदूरदर्शी व स्वार्थी नेताओं के कारण समझौतों की मेज पर हारता रहा है।

ऐसे ही नेतृत्व के कारण हथियारों से लैस होकर भी हमारे साहसी सैनिक कश्मीर में नमकहराम पत्थरबाजों से पिटते रहे हैं। जब मुट्ठी भर अंग्रेज स्वार्थी भारतीयों के कारण हजारों देशभक्त भारतीयों को फाँसी चढ़ा गये, जेलों में सड़ा गये और गोलियों से भून गये, तो मुस्लिमों के लिए मन्दिर तोड़ना कोई बड़ी बात थी? वैसे भी समस्त सल्तनत काल में केवल निम्न श्रेणी के हिन्दुओं को युद्ध के समय पैदल सेना में ही भरती किया जाता था, जिनको कोई विशेष मान व वेतन भी नहीं मिलता था। फिर ऐसे मजबूर लोगों के विरोध की चिन्ता विधर्मी शासक कहाँ करते थे। मुस्लिम लेखक लिखते हैं-

भारत : अलबिरूनी (संक्षिप्त हिन्दी अनुवाद-नूर नबी अब्बासी) में लिखा है- मुहम्मद इब्न अलकासिम इब्न अल मुनब्बी ने मुल्तान पर विजय पाकर उस (सूर्य की) मूर्ति के गले में गौ-मांस का एक टुकड़ा उसका उपहास करने के लिए लटकवा दिया। उसी जगह एक मस्जिद बनवाई गई। बाद में जब करामतियों ने मुल्तान पर अधिकार कर लिया, तो जलम इब्न शैबान ने, जिसने उस पर अनधिकार कब्जा किया था, उस मूर्ति के टुकड़े कर दिये और उसके पुजारियों को मरवा डाला।

थानेश्वर नगर के प्रति हिन्दुओं की अपार श्रद्धा है। वहाँ जो मूर्ति प्रतिष्ठित है, उसे चक्रस्वामिन् कहते हैं। अब वह गजना (गजनी) की रंगभूमि में भगवान सोमनाथ की मूर्ति के साथ, जो शिवलिंग का प्रतीक है, पड़ी हुई है। (पृ. ४७-४८)

"(सोमनाथ की) इस मूर्ति को शाह महमूद-रहमत उल्लाह अलैह (अल्लाह उस पर अपनी रहम करे) ने ४१६ हिजरी में नष्ट कर दिया। उसने हुक्म दिया कि मूर्ति का ऊपरी भाग तोड़ दिया जाए और शेष भाग उसके निवास-स्थान गजनी को भेज दिया जाए, जिसमें उसके सारे सोने के आच्छादनों, भूषणों और गुलकारीयुक्त वस्त्रों को भी शामिल किया जाए। उसके कुछ भाग को कांस्य मूर्ति चक्रस्वामिन् समेत जो थानेश्वर से लाई गई थी नगर की रंगभूमि में फेंक दिया जाए।

सोमनाथ की मूर्ति का एक और हिस्सा गजनी की मस्जिद के द्वार के सामने पड़ा हुआ है, जिस पर लोग मैल पोंछने के लिए अपने पैर रगड़ते हैं।' (पृ. २०४-०५)

इब्नबतूता की भारत यात्रा (अनुवादक मदन गोपाल) में लिखा है- "मस्जिद (जामा) के पूर्वीय द्वार के बाहर तांबे की दो बड़ी-बड़ी मूर्तियाँ पत्थर में जड़ी हुई धरातल पर पड़ी हैं। मस्जिद में आने-जाने वाले इन पर पैर रखकर आते-जाते हैं। मस्जिद के स्थान पर पहले मंदिर बना हुआ था। दिल्ली-विजय के उपरान्त मंदिर तुड़वाकर मस्जिद बनवाई गई। मस्जिद के उत्तरी चौक में एक मीनार खड़ी है।" (पृ. ३४)

शाहजहाँनामा (दामोदर लाल गर्ग) में लिखा है कि शासन के छठे वर्ष (१६३३ ई०) के आरम्भ में बादशाह शाहजहाँ ने यह हुक्म जारी कर दिया था कि हमारे इलाके में कोई नया मन्दिर नहीं बनवाया जाये। लाहौरी के अनुसार बादशाह ने सर्वप्रथम पुराने मंदिरों की मरम्मत और नये मंदिरों के निर्माणों को निषिद्ध कर दिया था, जब बादशाह को इस आदेश से सन्तोष नहीं हुआ, तो इसने नवनिर्मित मंदिरों को भी नष्ट करने के आदेश कर दिये।

श्रीराम शर्मा के कथनानुसार इन आदेशों की पालना केवल इलाहाबाद, बनारस अथवा गुजरात में ही नहीं हुई, बल्कि कश्मीर तक के मन्दिरों को इन आदेशों के नाम पर खंडहर कर दिया गया था।

अब्दुल हमीद लाहौरी इस बात की पुष्टि करता हुआ लिखता है कि अकेले इलाहाबाद प्रान्त से ही बहत्तर मन्दिरों को नष्ट किये जाने की सूचना दरबार में आई।

इससे उन्हें दोहरा लाभ हुआ। प्रथम तो कुफ्र के स्थान नष्ट हो गये, दूसरे उनकी सामग्री से नई मस्जिदों का निर्माण किया जाने लगा।

जहाँगीर के शासन में वीर सिंह बुन्देला द्वारा ओरछा में बनवाया गया विशाल मन्दिर शाहजहाँ ने अपने शासन

के प्रथम वर्ष में ही जुझारसिंह के विरुद्ध हुए युद्धकाल में नष्ट करवा दिया था। इसी प्रकार इच्छावल का हिन्दू मन्दिर नष्ट कर उसके स्थान पर मस्जिद का निर्माण करवा दिया था। सन् १६३०-३१ में इलाहाबाद प्रान्त में हरगाँव के हिन्दू जागीरदार अवदाल ने विद्रोह किया, तो उसकी जागीर के सभी मन्दिरों को धराशायी करवा दिया गया अथवा उन्हें मस्जिदों में परिवर्तित करवा दिया गया था एवं उनकी प्रतिमाओं को खंडित कर उनकी सीढ़ियों में लगवा दिया गया था। (पृ० ८०-८१)

औरंगजेबनामा (मुन्शी देवी प्रसाद, डॉ. कृष्ण वीर सिंह) में लिखा है- ९ अप्रैल १६६९ ई० को सूर्य ग्रहण था। ..... सम्राट (औरंगजेब) ने समस्त प्रांतों के व्यवस्थापकों को आदेश दिया कि इनके मन्दिर एवं विद्यालय आदि नष्ट कर दिये जावें। (पाद् टिप्पणी- मन्दिरों को गिराने का आदेश हुआ और गुर्जबरदार मलारने का मन्दिर गिराने के लिए भेजा गया।)- पृ.९०

वीर सिंह बुन्देले ने जहांगीर के कहने से अकबर के इतिहास अबुल फजल का वध कर दिया था। सम्राट बनने के पश्चात् जहांगीर ने इस सेवा के बदले वीर सिंह बुन्देला को मथुरा में मन्दिर बनाने की स्वीकृति दी। वीर सिंह ने ३३ लाख रुपये खर्च कर केशोराय मन्दिर का निर्माण करवाया। जनवरी १६७० में औरंगजेब ने इस प्रसिद्ध मन्दिर को ध्वस्त करने के आदेश दिये। कुछ ही दिनों में मजदूरों ने उस देवालय की सुदृढ़ नींव तक खोद डाली एवं उसे पूर्णतः नष्ट करके उस स्थान पर विपुल धन खर्च करके एक विशाल मस्जिद का निर्माण करवा दिया। .... छोटी-बड़ी जड़ित मूर्तियों को अकबराबाद स्थित नब्बाव कुदसिया बेगम की मस्जिद की सीढ़ियों के नीचे गाड़ दिया गया। मथुरा का नाम परिवर्तित करके इस्लामाबाद रख दिया गया। (पृ. ९९)

खण्डेले के राजपूतों को दण्डित करने एवं बड़े मन्दिरों को ध्वस्त करने के लिए दाराब खाँ एक बड़ी सेना के साथ वहाँ गया। बहरेमंद खाँ को उसके सहायक के रूप में भेजा गया (अक्तूबर १६७८)- पृ० १५३ (मार्च १६७९) घमासान युद्ध हुआ, जिसमें सैकड़ों राजपूत युद्ध में लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त हुए। युद्ध में एक भी राजपूत जीवित नहीं बचा। खंडेला, सानुला एवं उस जिले के समस्त मन्दिर ध्वस्त कर दिये गये। (पृ० १५६)

२५ मई १६७९ ई० को खानजहाँ बहादुर जोधपुर के प्रतिष्ठित एवं प्राचीन मंदिरों को ध्वस्त कर, देव प्रतिमाओं को अनेकों गाड़ियों में भरकर राजसभा के समक्ष उपस्थित हुआ। सम्राट ने उसकी भूरी-भूरी प्रशंसा एवं शाबाशी देते हुए कहा कि देव प्रतिमाओं को राय आँगन (जलूखाने) और जामा मस्जिद की सीढ़ियों के नीचे डाल देवें ताकि वे जनसामान्य की ठोकरों में घूमती रहें।' (पृ० १५६-५७)

जनवरी १६८० में औरंगजेब ने राणा राजसिंह पर आक्रमण करने के लिए सेना भेजी। २५ जनवरी को बादशाह राणा के बनाये हुए उदय सागर तालाब को देखने गये। उन्होंने वहाँ पर पाल के ऊपर बने तीन मंदिरों को गिराने का आदेश दिया।.... ३० जनवरी को सेनापति हुसैन अली खाँ राणा के डेरे से २० ऊँट सामान से भरकर बादशाह की सेवा में लाया। उसने यह भी प्रार्थना की कि राणा की हवेली के आगे के तथा १७२ दूसरे मंदिर उदयपुर जिले में गिराए गए। इस पर उसे बहादुर आलमगीर शाही का खिताब मिला। (पृ० १६२)

ये तो स्थालीपुलाक न्याय से कुछ प्रमाण उन्हीं बादशाहों के लेखकों द्वारा लिखे ग्रन्थों से लिये हैं। **यद्यपि इन ग्रन्थों में लिखा है कि मन्दिर तोड़कर मस्जिदें बनाई गईं, पर पी.एन.ओक का मानना है कि मन्दिरों में कुछ परिवर्तन (अन्दर बाहर की मूर्तियाँ हटाना, मीनार, गुम्बद बनाना) करके उन्हीं को मस्जिद का रूप दे दिया गया था।** यदि मुस्लिम बादशाह कुछ समझदार होंगे, तो धन व परिश्रम बचाने के लिए उन्होंने ऐसा ही किया होगा। फिर भी यह तो सत्य है कि मन्दिर तोड़े गये। (क्रमशः) ❑❑

भारतीय मुसलमानों के हिन्दु पूर्वज मुसलमान कैसे बने?

(डॉ0 विवेक आर्य, दिल्ली, मो0- 08076985517)

दुबई में मैरियट होटल के विश्व प्रसिद्ध भारतीय शेफ अतुल कोचर ने प्रियंका चोपड़ा के क्वांटिको नाटक में हिन्दुओं को आतंकवादी के रूप में प्रदर्शित करने पर प्रतिक्रिया रूप में अपना ट्वीट किया। इस ट्वीट में अतुल ने प्रियंका को पिछले २००० वर्षों में हिन्दुओं पर मुसलमानों द्वारा किये गए अत्याचारों को नजरअंदाज करने का आरोप लगाया। इस्लामिक देश में अतुल के ट्वीट के बदले उन्हें नौकरी से निकाल दिया गया और उन पर कानूनी कार्यवाही करने पर विचार किया जा रहा है। देखा जाये तो यह प्रयास एक प्रकार से केवल अतुल कोचर को ही नहीं, अपितु समस्त हिनदू समाज को आतंकित करने का प्रयास है। अतुल ने कुछ भी गलत नहीं कहा। अगर आप हमारे देश के इतिहास को उठाकर देखेंगे, तो आपको ज्ञात होगा कि किस प्रकार से हमारे पूर्वजों ने अनगिनत अत्याचार इस्लाम के नाम पर सहे हैं और आज भी सह रहे हैं। इस लेख के माध्यम से उन अत्याचारों का बखान किया जायेगा, जिन्हें हमारे देश के पाठ्यक्रम में न तो पढ़ाया जाता है और न ही बताया जाता है। यह एक प्रकार से हिन्दू समाज के मानवाधिकारों की अनदेखी ही है।

इस लेख में हम इस्लामिक आक्रान्ताओं के अत्याचारों को सप्रमाण देकर यह सिद्ध करेंगे कि भारतीय मुसलमानों के पूर्वज हिन्दू थे एवं उनके पूर्वजों पर इस्लामिक आक्रान्ताओं ने अनेक अत्याचार कर उन्हें जबरन धर्म परिवर्तन के लिए विवश किया था। अनेक मुसलमान भाइयों का यह कहना है कि भारतीय इतिहास मूलतः अंग्रेजों द्वारा रचित है। इसलिए निष्पक्ष नहीं है। यह असत्य है। क्यूंकि अधिकांश मुस्लिम इतिहासकार आक्रमणकारियों अथवा सुल्तानों के वेतन-भोगी थे। उन्होंने अपके आका की अच्छाइयों को बढ़ा-चढ़ाकर लिखकर एवं बुराइयों को छुपाकर उन्होंने अपनी स्वामीभक्ति का भरपूर परिचय दिया है। तथापि इस शंका के निवारण के लिए अधिकाधिक मुस्लिम इतिहासकारों के आधार पर रचित अंग्रेज लेखक ईलियट एंड डाउसन द्वारा संगृहीत एवं प्रामाणिक समझी जाने वाली पुस्तकों का इस लेख में प्रयोग करेंगे।

भारत पर ७वीं शताब्दी में मुहम्मद बिन कासिम से लेकर १७वीं शताब्दी में अहमद शाह अब्दाली तक करीब १२०० वर्षों में अनेक आक्रमणकारियों ने हिन्दुओं पर अनगिनत अत्याचार किये। धार्मिक, राजनैतिक एवं सामाजिक रूप से असंगठित होते हुए भी हिन्दू समाज ने मतान्ध अत्याचारियों का भरपूर प्रतिकार किया। सिंध के राजा दाहिर और उनके बलिदानी परिवार से लेकर वीर मराठा पानीपत के मैदान तक अब्दाली से टकराते रहे। आक्रमणकारियों का मार्ग कभी भी निष्कंटक नहीं रहा अन्यथा सम्पूर्ण भारत कभी का दारुल इसलाम (इस्लामिक भूमि) बन गया होता। आरम्भ के आक्रमणकारी यहाँ आते, मारकाट-लूटपाट करते और वापिस चले जाते। बाद की शताब्दियों में उन्होंने न केवल भारत को अपना घर बना लिया, अपितु राजसत्ता भी ग्रहण कर ली।

अब हम कुछ आक्रमणकारियों जैसे मौहम्मद बिन कासिम, महमूद गजनवी, मौहम्मद गौरी और तैमूर के अत्याचारों की चर्चा करेंगे।

मौहम्मद बिन कासिम

भारत पर आक्रमण कर सिंध प्रान्त में अधिकार प्रथम बार मुहम्मद बिन कासिम को मिला था। उसके अत्याचारों से सिंध की धरती लहूलुहान हो उठी थी।

कासिम से उसके अत्याचारों का बदला राजा दाहिर की दोनों पुत्रियों ने कूटनीति से लिया था।

१. प्रारंभिक विजय के पश्चात् कासिम ने ईराक के गवर्नर हज्जाज के अपने पत्र में लिखा- "दाहिर का भतीजा, उसके योद्धा और मुख्य मुख्य अधिकारी कत्ल कर दिये गये हैं। हिन्दुओं को इस्लाम में दीक्षित कर लिया गया है, अन्यथा कत्ल कर दिया गया है। मूर्ति-मंदिरों के स्थान पर मस्जिदें खड़ी कर दी गई हैं। अजान दी जाती है।"

२. वही मुस्लिम इतिहाकार आगे लिखता है- "मौहम्मद बिन किसम ने रिवाड़ी का दुर्ग विजय कर लिया। वह वहाँ दो-तीन दिन ठहरा। दुर्ग में मौजूद ६००० हिन्दू योद्धा वध कर दिये गये, उनकी पत्नियाँ, बच्चे, नौकर-चाकर सब कैद कर लिये (दास बना लिये गये) यह संख्या लगभग ३० हजार थी। इनमें दाहिर की भांजी समेत ३० अधिकारियों की पुत्रियाँ भी थीं।

महमूद गजनवी

महमूद गजनी का नाम भारत के अंतिम हिन्दू सम्राट पृथ्वी राज चौहान को युद्ध में हराने और बंदी बनाकर अफगानिस्तान लेकर के लिए प्रसिद्ध है। गजनी मजहबी उन्माद एवं मतान्धता का जीता जागता प्रतीक था।

१. भारत पर आक्रमण प्रारंभ करने से पहले इस २० वर्षीय सुल्तान ने यह धार्मिक शपथ ली कि वह प्रति वर्ष भारत पर आक्रमण करता रहेगा, जब तक कि वह देश मूर्ति बहुदेवता पूजा से मुक्त होकर इस्लाम स्वीकार न कर ले। अल उतबी इस सुल्तान की भारत विजय के विषय में लिखता है- 'अपने सैनिकों को शस्त्रास्त्र बाँट कर अल्लाह से मार्गदर्शन और शक्ति की आस लगाये सुल्तान ने भारत की ओर प्रस्थान किया। पुरुषपुर (पेशावर) पहुँचकर उसने उस नगर के बाहर अपने डेरे गाड़ दिये।

२. मुसलमानों को अल्लाह के शत्रु काफिरों से बदला लेते दोपहर हो गयी। इसमें १५००० काफिर मारे गये और पृथ्वी पर दरी की भांति बिछ गये, जहाँ वह जंगली पशुओं और पक्षियों का भोजन बन गये। जयपाल के गले से जो हार मिला, उसका मूल्य २ लाख दीनार था। उसके दूसरे रिश्तेदारों और युद्ध में मारे गये लोगों की तलाशी से ४ लाख दीनार का धन मिला। इसके अतिरिक्त अल्लाह ने अपने मित्रों को ५ लाख सुन्दर गुलाम स्त्रियों और पुरुष भी बखशे।

३. कहा जाता है कि पेशावर के पास वाये-हिन्द पर आक्रमण के समय महमूद ने महाराज जयपाल और उसके १५ मुख्य सरदारों और रिश्तेदारों को गिरफ्तार कर लिया था। सुखपाल की भाँति इनमें से कुछ मृत्यु के भय से मुसलमान हो गये। भेरा में, सिवाय उनके, जिन्होंने इस्लाम स्वीकार कर लिया, सभी निवासी कत्ल कर दिये गये। स्पष्ट है कि इस प्रकार धर्मपरिवर्तन करने वालों की संख्या काफी रही होगी।

४. मुल्तान में बड़ी संख्या में लोग मुसलमान हो गये। जब महमूद ने नवासा शाह पर (सुखपाल का धर्मान्तरण के बाद का नाम) आक्रमण किया, तो उतवी के अनुसार महमूद द्वारा धर्मान्तरण का अभूतपूर्व प्रदर्शन हुआ। काश्मीर घाटी में भी बहुत से काफिरों को मुसलमान बनाया गया और उस देश में इस्लाम फैलाकर वह गजनी लौट गया।

५. उतबी के अनुसार जहाँ भी महमूद जाता था, वहीं वह निवासियों को इस्लाम स्वीकार करने पर मजबूर करता था। इस बलात् धर्म-परिवर्तन अथवा मृत्यु का चारों ओर इतना आतंक व्याप्त हो गया था कि अनेक शासक बिना युद्ध किये ही उसके आने का समाचार सुनकर भाग खड़े होते थे। भीमपाल द्वारा चाँद राय को भगने की सलाह देने का यही कारण था कि कहीं राय महमूद के हाथ पड़कर बलात् मुसलमान न बना लिया जाये, जैसा कि भीमपाल के चाचा और रिश्तेदारों के साथ हुआ था।

६. १०२३ ई० में किरात, नूर, लौहकोट और लाहौर पर हुए चौदहवें आक्रमण के समय किरात के शासक

ने इस्लाम स्वीकार कर लिया और उसकी देखा-देखी दूसरे बहुत से लोग मुसलमान हो गये। निजामुद्दीन के अनुसार देश के इस भाग में इस्लाम शांतिपूर्वक भी फैल रहा था और बलपूर्वक भी। सुल्तान महमूद कुरान का विद्वान था और उसकी उत्तम परिभाषा कर लेता था। इसलिये यह कहना कि उसका कोई कार्य इस्लाम विरुद्ध था, झूठा है।

७. हिन्दुओं ने इस पराजय को राष्ट्रीय चुनौती के रूप में ले लिया। अगले आक्रमण के समय जयपाल के पुत्र आनंद पाल ने उज्जैन, ग्वालियर, कन्नौज, दिल्ली और अजमेर के राजाओं की सहायता से एक बड़ी सेना लेकर महमूद का सामना किया। फरिश्ता लिखता है कि ३०,००० खोकर राजपूतों ने जो नंगे पैरों और नंगे सिर लड़ते थे, सुल्तान की सेना में घुस कर थोड़े से समय में ही तीन-चार हजार मुसलमानों को काट कर रख दिया। सुल्तान युद्ध बंद कर वापिस जाने की सोच ही रहा था कि आनंद पाल का हाथी अपने ऊपर नेपथा के अग्नि गोले के गिरने से भाग खड़ा हुआ। हिन्दू सेना भी उसके पाछे भाग खड़ी हुई।

८. सराय (नारदीन) का विध्वंस- सुल्तान ने (कुछ समय ठहरकर) फिर हिन्द पर आक्रमण करने का इरादा किया। अपनी घुड़सवार सेना को लेकर वह हिन्द के मध्य तक पहुँच गया। वहाँ उसने ऐसे-ऐसे शासकों को पराजित किया, जिन्होंने आज तक किसी अन्य व्यक्ति के आदेशों का पालन करना नहीं सीखा था। सुल्तान ने उनकी मूर्तियाँ तोड़ डालीं और उन दुष्टों को तलवार के घाट उतार दिया। उसने इन शासकों के नेता से युद्ध कर उन्हें पराजित किया। अल्लाह के मित्रों ने प्रत्येक पहाड़ी और वादी को काफिरों के खून से रंग दिया और उनको घोड़े, हाथियों सहित बड़ी भारी संपत्ति मिली।

९. नंदना की विजय के पश्चात् सुल्तान लूट का भारी सामान ढोती अपनी सेना के पीछे-पीछे चलता हुआ, वापिस लौटा। गुलाम तो इतने थे कि गजनी की गुलाम-मंडी में उनके भाव बहुत गिर गये। अपने (भारत) देश में अति प्रतिष्ठा प्राप्त लोग साधारण दुकानदारों के गुलाम होकर पतित हो गये। किन्तु यह तो अल्लाह की महानता है कि जो अपने मजहब को प्रतिष्ठित करता है और मूर्ति-पूजा को अपमानित करता है।

१०. थानेसर में कत्ले आम- थानेसर का शासक मूर्ति-पूजा में घोर विश्वास करता था और अल्लाह (इस्लाम) को स्वीकार करने को किसी प्रकार भी तैयार नहीं था। सुल्तान ने (उसके राज्य से) मूर्ति-पूजा को समाप्त करने के लिये अपने बहादुर सैनिकों के साथ कूच किया। काफिरों के खून से, नदी लाल हो गई और उसका पानी पीने योग्य नहीं रहा। यदि सूर्य न डूब गया होता, तो और अधिक शत्रु मारे जाते। अल्लाह की कृपा से विजय प्राप्त हुई जिसने इस्लाम को सदैव-सदैव के लिये सभी दूसरे मत-मतान्तरों से श्रेष्ठ स्थापित किया है, भले ही मूर्ति-पूजक उसके विरुद्ध कितना ही विद्रोह क्यों न करें। सुल्तान, इतना लूट का माल लेकर लौटा जिसका कि हिसाब लगाना असंभव है। स्तुति अल्लाह की जो सारे जगत का रक्षक है कि वह इस्लाम और मुसलमानों को इतना सम्मान बख्शता है।

११. अस्नी पर आक्रमण- जब चन्देल को सुल्तान के आक्रमण का समाचार मिला, तो डर के मारे उसके प्राण सूख गये। उसके सामने साक्षात् मृत्यु मुँह बाये खड़ी थी। सिवाय भागने के उसके पास दूसरा विकल्प नहीं था। सुल्तान ने आदेश दिया कि उसके पाँच दुर्गों की बुनियाद तक खोद डाली जाये। वहाँ के निवासियों को उनके मल्बे में दबा दिया अथवा गुलाम बना लिया गया। चन्देल के भाग जाने के कारण सुल्तान ने निराश होकर अपनी सेना को चान्द राय पर आक्रमण करने का आदेश दिया जो हिन्द के महान शासकों में से एक है और सरसावा दुर्ग में निवास करता है।

१२. सरसावा (सहारनपुर) में भयानक रक्तपात- सुल्तान ने अपने अत्यंत धार्मिक सैनिकों को इकट्ठा

किया और दगात्रु पर तुरन्त आक्रमण करने का आदेश दिये। फलस्वरूप बड़ी संख्या में हिन्दू मारे गये अथवा बंदी बना लिये गये। मुसलमानों ने लूट की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जब तक कत्ल करते-करते उनका मन नहीं भर गया। उसके बाद ही उन्होंने मुर्दों की तलाशी लेनी प्रारंभ की जो तीन दिन तक चली। लूट में सोना, चाँदी, माणिक, सच्चे मोती, जो हाथ आये जिनका मूल्य लगभग तीस लाख दिरहम रहा होगा। गुलामों की संख्या का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि प्रत्येक को २ से लेकर १० दिरहम तक में बेचा गया। दूगोष को गजली ले जाया गया। दूर-दूर के देशों से व्यापारी उनको खरीदने आये। मवाराउन-नहर ईराक, खुरासान आदि मुस्लिम देश इन गुलों से पट गये। गोरे, काले, अमीर गरीब दासता की समान जंजीरों में बँधकर एक हो गये।

१३. सोमनाथ का पतन- अल-काजवीनी के अनुसार 'जब महमूद सोमनाथ के विध्वंस के इरादे से भारत गया, तो उसका विचार यही था कि (इतने बड़े उपसाय देवते के टूटने पर) हिन्दू (मूर्ति पूजा के विश्वास को त्यागकर) मुसलमान हो जायेंगे। दिसम्बर १०२५ में सोमनाथ का पतन हुआ। हिन्दुओं ने महमूद से कहा कि वह जितना धन लेना चाहे ले ले, परन्तु मूर्ति को न तोड़े। महमूद ने कहा कि वह इतिहास में मूर्ति-भंजक के नाम से विख्यात होना चाहता है, मूर्ति व्यापारी के नाम से नहीं। महमूद का यह ऐतिहासिक उत्तर ही यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है कि सोमनाथ के मंदिर को विध्वंस करने का उद्देश्य धार्मिक था, लोभ नहीं। मूर्ति तोड़ दी गई। दो करोड़ दिरहम की लूट हाथ लगी, पचास हजार हिन्दू कत्ल कर दिये गये। लूट में मिले हीरे, जवाहरातों, सच्चे मोतियों की, जिनमें कुछ अनार के बराबर थे, गजनी में प्रदर्शनी लगाई गई जिसको देखकर वहाँ के नागरिकों और दूसरे देशों के राजदूतों की आँखें फैल गई।

मौहम्मद गौरी

मुहम्मद गौरी नाम गुजरात के सोमनाथ के भव्य मंदिर के विध्वंश के कारण सबसे अधिक कुख्यात है। गौरी ने इस्लामिक जोश के चलते लाखों हिन्दुओं के लहू से अपनी तलवार को रंगा था।

१. मुस्लिम सेना ने पूर्ण विजय प्राप्त की। एक लाख नीच हिन्दू नरक सिधार गये (कत्ल कर दिये गये)। इस विजय के पश्चात् इस्लामी सेना अजमेर की ओर बढ़ी- वहाँ इतना लूट का माल मिला कि लगता था कि पहाड़ों और समुद्रों ने अपने गुप्त खजाने खोद दिये हों। सुल्तान जब अजमेर में ठहरा, तो उसने वहाँ के मूर्ति-मंदिरों की बुनियादों तक को खुदवा डाला और उनके स्थान पर मस्जिदें और मदरसे बना दिये, जहाँ इस्लाम और शरियत की शिक्षा दी जा सके।

२. फरिश्ता के अनुसार मौहम्मद गौरी द्वारा ४ लाख 'खोकर' और 'तिराहिया' हिन्दुओं को इस्लाम ग्रहण कराया गया।

३. इब्ल-अल-असीर के द्वारा बनारस के हिन्दुओं का भयानक कत्ले आम हुआ। बच्चों और स्त्रियों को छोड़कर और कोई नहीं बख्शा गया। स्पष्ट है कि सब स्त्री और बच्चे गुलाम और मुसलमान बना लिये गये।

तैमूर लंग

तैमूर लंग अपने समय का सबसे अत्याचारी हमलावर था। उसके कारण गांव के गांव लाशों के ढेर में तब्दील हो गए थे। लाशों को जलाने वाला तक बचा नहीं था।

१. १३९८ ई० में तैमूर का भारत पर भयानक आक्रमण हुआ। अपनी जीवनी 'तुजुके तैमूरी' वह कुरान की इस आयत से ही प्रारंभ करता है 'ऐ पैगम्बर काफिरों और विश्वास न लाने वालों से युद्ध करो और उन पर सख्ती बरतो।' वह आगे भारत पर अपने आक्रमण का कारण बताते हुए लिखता है। 'हिन्दुस्तान पर आक्रमण करने का मेरा ध्येय काफिर हिन्दुओं के विरुद्ध धार्मिक युद्ध करना है (जिससे) इस्लाम की सेना को भी हिन्दुओं

की दौलत और मूल्यवान वस्तुएँ मिल जायें।

२. कश्मीर की सीमा पर कटोर नामी दुर्ग पर आक्रमण हुआ। उसने तमाम पुरुषों को कत्ल और स्त्रियों और बच्चों को कैद करने का आदेश दिया। फिर उन हठी काफिरों के सिरों के मीनार खड़े करने के आदेश दिये। फिर भटनेर के दुर्ग पर घेरा डाला गया। वहाँ के राजपूतों ने कुछ युद्ध के बाद हार मान ली और उन्हें क्षमादान दे दिया गया। किन्तु उनके असावधान होते ही उन पर आक्रमण कर दिया गया। तैमूर अपने जीवनी में लिखता है कि 'थोड़े ही समय में दुर्ग के तमाम लोग तलवार के घाट उतार दिये गये। घंटे भर में दस हजार लोगों के सिर काटे गये। इस्लाम की तलवार ने काफिरों के रक्त में स्नान किया। उनके सरोसामान, खजाने और अनाज को भी, जो वर्षों से दुर्ग में इकट्ठा किया गया था, मेरे सिपाहियों ने लूट लिया। मकानों में आग लगा कर राख कर दिया। इमारतों और दुर्ग को भूमिसात कर दिया गया।'

३. दूसरा नगर सरसुती था, जिस पर आक्रमण हुआ। सभी काफिर हिन्दू कत्ल कर दिये गये। उनके स्त्री और बच्चे और संपत्ति हमारी हो गई। तैमूर ने जब जाटों के प्रदेश में प्रवेश किया। उसने अपनी सेना को आदेश दिया कि 'जो भी मिल जाये, कत्ल कर दिया जाये।' और फिर सेना के सामने जो भी ग्राम या नगर आया, उसे लूटा गया। पुरुषों को कत्ल कर दिया गया और कुछ लोगों, स्त्रियों और बच्चों को बंदी बना लिया गया।'

४. दिल्ली के पास लोनी हिन्दू नगर था। किन्तु कुछ मुसलमान भी बंदियों में थे। तैमूर ने आदेश दिया कि मुसलमानों को छोड़कर शेष सभी हिन्दू बंदी इस्लाम की तलवार के घाट उतार दिये जायें। इस समय तक उसके पास हिन्दू बंदियों की संख्या एक लाख हो गयी थी। जब यमुना पार कर दिल्ली पर आक्रमण की तैयारी हो रही थी उसके साथ के अमीरों ने उससे कहा कि इन बंदियों को कैम्प में नहीं छोड़ा जा सकता और इन इस्लाम के शत्रुओं को सवतंत्र कर देना भी युद्ध के नियमों के विरुद्ध होगा। तैमूर लिखता है- 'इसलिये उन लोगों को सिवाय तलवार का भोजन बनाने के कोई मार्ग नहीं था। मैंने कैम्प में घोषणा करवा दी कि तमाम बंदी कत्ल कर दिये जायें और इस आदेश के पालन में जो भी लापरवाही करे उसे भी कत्ल कर दिया जाये और उसकी सम्पत्ति सूचना देने वाले को दे दी जाये। जब इस्लाम के गाजियों (काफिरों का कत्ल करने वालों का आदर सूचक नाम) को यह आदेश मिला तो उन्होंने तलवारें सूत लीं और अपने बंदियों को कत्ल कर दिया। उस दिन एक लाख अपवित्र मूर्ति-पूजक काफिर कत्ल कर दिये गये।

इसी प्रकार के कत्लेआम, धर्मांतरण का विवरण कुतुबुद्दीन ऐबक, इल्तुतमिश, खिलजी, तुगलक से लेकर तमाम मुगलों तक का मिलता है। अकबर और औरंगज़ेब के जीवन के विषय में चर्चा हम अलग से करेंगे। भारत के मुसलमान आक्रमणकारियों बाबर, मौहम्मद बिन-कासिम, गौरी, गजनवी इत्यादि लुटेरों को और औरंगजेब जैसे साम्प्रदायिक बादशाह को गौरव प्रदान करते हैं और उनके द्वारा मंदिरों को तोड़कर बनाई गई मस्जिदों व दरगाहों को इस्लाम की काफिरों पर विजय और हिन्दू अपमान के स्मृति चिन्ह बनाये रखना चाहते हैं। संसार में ऐसा शायद ही कहीं देखने को मिलेगा कि जब एक कौम अपने पूर्वजों पर अत्याचार करने वालों को महान सम्मान देती हो और अपने पूर्वजों के आराध्य हिन्दू देवी देवताओं, भारतीय संस्कृति एवं विचारधारा के प्रति उसके मन में कोई आकर्षण न हो।

(नोट- इस लेख को लिखने में "भारतीय मुसलमानों के हिन्दू पूर्वज (मुसलमान कैसे बने)" नामक पुस्तक लेखक पुरुषोत्तम, प्रकाशक कर्ता हिन्दू राइटर फोरम, राजौरी गार्डन, दिल्ली का प्रयोग किया गया है।)

❑❑

आइए विचार करें- क्या हो सकता है सृष्टि रचना का प्रयोजन?

(भावेश मेरजा)

वैदिक तत्त्वज्ञान अनुसार सृष्टि की रचना ईश्वर करता है। ईश्वर प्रकृति नामक उपादान कारण (Material Cause) से जीवों के कल्याण के लिए सृष्टि की रचना करता है। वैदिक तत्वज्ञान में इन तीनों सत्ताओं अर्थात् ईश्वर, जीव और प्रकृति को अनादि, अनुत्पन्न माना गया है।

वैदिक तत्त्वज्ञान अनुसार यह सृष्टि 'प्रवाह से अनादि' है। इसका अर्थ यह हुआ कि वर्तमान सृष्टि से पूर्व अनन्त बार सृष्टि बनी है और इस वर्तमान सृष्टि के पश्चात् भी अनन्त बार सृष्टि बनने वाली है। जैसे भूतकाल में सृष्टि अनन्त बार बनी है, वैसे भविष्य में भी वह अनन्त बार बनेगी।

ईश्वर, जीव और प्रकृति- ये तीनों सत्ताएं समय की दृष्टि से अनादि, अनन्त हैं। ईश्वर कब से है? जब से जीव और प्रकृति है। जीव कब से हैं? जब से ईश्वर और प्रकृति हैं। प्रकृति कब से है? जब से ईश्वर और जीव हैं। ठीक ऐसे ही, ईश्वर कब तक रहेगा? जब तक जीव और प्रकृति रहेंगे। जीव कब तक रहेंगे? जब तक ईश्वर और प्रकृति रहेंगे। प्रकृति कब तक रहेगी? जब तक ईश्वर और जीव रहेंगे। अतः ईश्वर ने सर्वप्रथम बार सृष्टि (The very first creation) कब बनाई?- यह प्रश्न इन तीनों सत्ताओं के अनादि, अनन्त स्वरूप को, उनके सह-अस्तित्व को समझ लेने वाले जिज्ञासु को भूतकाल की अनन्तता (never-ending past) की ओर से सोचने को विवश करेगा। उसे उसी समाधान से सन्तुष्ट होना होगा कि जब से ईश्वर है, तभी से वह सृष्टि रचयिता है। ईश्वर का होना और ईश्वर का सृष्टि रचयिता होना, एक-सी बात है। ठीक वैसे ही जैसे अनन्त-भविष्य (un-ending future) के पक्ष में भी सोचना होगा। इसलिए जब तक ईश्वर है, तब तक वह सृष्टि-रचयिता रहेगा। जैसे भूत के गर्भ में अनन्त सृष्टि रही है, वैसे भविष्य के गर्भ में भी अनन्त सृष्टि (होने वाली) है! यह क्रम कभी रुकने वाला नहीं। This sequence of creation and dissolution of the universe has no start, no end - means there is nothing like the 'first creation' or the 'last creation'. The cycle of creation and dissolution has been for eternity and always goes on for eternity. यह एक समाधान तो है ही, परन्तु इस समाधान से सभी जिज्ञासुओं को पूर्ण सन्तुष्टि हो जाए, ऐसा समझना भी उचित नहीं होगा। क्योंकि अनन्तता के विचार को ठीक से मानव मस्तिष्क में बौद्धिक दृष्टि से उपस्थित कर पाना प्रायः कठिन है। अतः इस बात को सभी पाठक इसी रूप में मान लेवें, ऐसा आग्रह करने के स्थान पर जिज्ञासु लोग इस विषय पर अधिकाधिक विचार करें, यही आवकार्य है।

ईश्वर सभी दृष्टि से पूर्ण सत्ता है। वह ज्ञान में पूर्ण है अर्थात् वह अपने स्वरूप के बारे में, जीवों के स्वरूप तथा उनके कर्मों के बारे में और प्रकृति तथा प्रकृति से उत्पन्न सर्व पदार्थों के स्वरूप तथा देश, काल आदि बारे में सब कुछ जानता है। ईश्वर यथार्थ जानता है, उसका ज्ञान निर्भ्रान्त होता है। आनन्द की दृष्टि से भी ईश्वर पूर्ण है। उसका आनन्द स्वाभाविक है, अतः वह नित्य एवं एकरस है। ईश्वर और उसका आनन्द अभिन्न है, उनमें समवाय सम्बन्ध है। दूसरे शब्दों में ईश्वर आनन्द-स्वरूप है। व्यापकता या विद्यमानता की दृष्टि से भी ईश्वर पूर्ण सत्ता है। वह न केवल प्रकृति, सृष्टि और जीवों में व्यापक-विद्यमान है, जहाँ कोई भौतिक पदार्थ और जीव नहीं है, वहाँ भी ईश्वर की सत्ता जैसी यहाँ है, वैसी ही है। अतः स्थान की दृष्टि से भी ईश्वर पूर्ण है। ऐसे ही बल, क्रिया-सामर्थ्य, न्याय, दया आदि अन्य गुणों की दृष्टि से भी ईश्वर पूर्ण है।

प्रकृति और उससे निर्मित सभी पदार्थ स्वभावतः

जड़, अचेतन, ज्ञान तथा संवेदना से शून्य हैं। उनमें न इच्छा होती है और न ही सुख-दुःख की संवेदना। हां, ईश्वर जब जड़ प्रकृति से सृष्टि और सृष्टिगत अन्य प्राकृतिक पदार्थों को बनाता है, तो वह अपने अलौकिक ज्ञान-विज्ञान और रचना कौशल से उन्हें ऐसा स्वरूप प्रदान करता है कि उनके सदुपयोग से वे जीवों के सुख का कारण बन सकते हैं। इसलिए सृष्टिगत पदार्थों के ज्ञानपूर्वक उपयोग (भोग) से जीवों को सुख की प्राप्ति हो सकती है। अपने द्वारा निर्मित इस सृष्टि का सुख-प्राप्ति और दुःख-निवृत्ति के लिए कैसे सदुपयोग करना है, इसका अपेक्षित ज्ञान भी परम दयालु ईश्वर हमें वेदों के माध्यम से प्रत्येक सृष्टि के आरम्भ में प्रदान करता है।

जीव का स्थान ईश्वर तथा प्रकृति के बीच का है। न वह ईश्वर की तरह सर्वज्ञ है और न ही प्रकृति की तरह सर्वथा अज्ञ- ज्ञानशून्य। जीव है अल्पज्ञ। आनन्द उसका स्वाभाविक गुण नहीं है। अतः आनन्द पाने के लिए, आनन्दित होने के लिए उसे अपने से भिन्न सत्ताओं का सहारा लेना पड़ता है, अन्यथा वह अपने को आनन्दित नहीं कर सकता। इसलिए ईश्वर, प्रकृति (प्राकृतिक पदार्थ) तथा अन्य जीवों से अपना सम्बन्ध स्थापित कर वह आनन्द प्राप्त करने का प्रयास करता रहता है। आनन्द एक ऐसा विचित्र एवं श्रेष्ठ गुण है कि जीव उसकी उपेक्षा ही नहीं कर सकता। अतः सभी जीव ऐसी इच्छा तो सदैव करते हैं कि मैं आनन्दित रहूँ, परन्तु मुझे आनन्द नहीं चाहिए, मुझे दुःख, शोक चाहिए, ऐसी इच्छा कोई जीव नहीं करता है। जीव की आनन्द-प्राप्ति की इच्छा सहज स्वाभाविक है। जीव जो कुछ भी चेष्टा करता है, उसका अन्तिम प्रयोजन आनन्द-प्राप्ति और दुःखों से मुक्ति ही होता है। इसी के लिए वह प्रयत्न या कर्म करता है। जैसे ईश्वर अनन्त काल से और अनन्त काल के लिए सृष्टि-रचयिता है, वैसे जीव भी अनन्त काल से और अनन्त काल के लिए प्रयत्नकर्ता या कर्मों का कर्ता है। अतः जीव और उसके कर्म भी 'प्रवाह से अनादि' हैं। काल की दृष्टि से अनादि जीव अनादि काल से कर्मों का कर्ता है और अनन्त काल तक कर्मों का कर्ता रहेगा। दूसरे शब्दों में, जीव है तो कर्म भी है। बिना कर्मों के जीव हो नहीं सकता। ध्यातव्य है कि अल्पज्ञ जीवों के कर्मों का फल सर्वज्ञ, न्यायकारी परमात्मा देता है।

सर्वज्ञ ईश्वर जीवों के स्वरूप को पूर्णतः जानता है। वह जानता है कि ये जीव आनन्द की प्राप्ति हेतु प्रयत्नशील रहते हैं और उन्हें आनन्द प्राप्त करने के लिए मेरी (ईश्वर की) और सृष्टि की आवश्यकता रहेगी। दूसरी बात यह कि इन जीवों के द्वारा किए गए कर्मों के फल देने के लिए भी सृष्टि को रचना आवश्यक है। इन दो प्रयोजनों के लिए- १. जीवों के कल्याण के लिए अर्थात् परोपकारार्थ और २. जीवों के द्वारा किए गए कर्मों का फल देने के लिए- ईश्वर सृष्टि रचता है, ऐसा समझा जा सकता है। सृष्टि का ज्ञानपूर्वक भोग कर, अपवर्ग (मुक्ति) की प्राप्ति करने वाले जीव ईश्वर के उद्देश्य को सार्थक कर रहे हैं, ऐसा हम कह सकते हैं। जो लोग सृष्टि के पदार्थों का दुरुपयोग कर, उनका अन्धाधुन्ध भोग कर, सृष्टि का समुचित लाभ न उठाकर, मुक्ति की प्राप्ति हेतु कुछ भी यत्न नहीं करते हैं, वे वास्तव में ईश्वर के सदाशय की उपेक्षा, अवहेलना करते हैं, ऐसा भी समझा जा सकता है। वास्तव में ऐसे ही लोगों की संज्ञा 'नास्तिक' होनी चाहिए।

सृष्टि रचना का एक अन्य कारण भी विचारणीय है- ईश्वर में जो अद्भुत सांमर्थ्य है, वह तब ही सिद्ध हो सकता है, जब वह सृष्टि को बनाए। ईश्वर के अद्भुत ज्ञान, बल, न्याय, दया इत्यादि गुणों का साफल्य होना, यह भी सृष्टि रचना का एक प्रयोजन है। सामर्थ्य होते हुए भी उसका सम्प्रयोग न करना कोई प्रशंसनीय बात नहीं। अतः ईश्वर अपने इस स्वाभाविक सामर्थ्य का प्रयोग सृष्टि की रचना, संचालन एवं प्रलय आदि के माध्यम से करता है और जीवों को आनन्दित करने का, उन्हें मुक्ति के साधन उपलब्ध कराने का सुयोग निरन्तर प्राप्त कराता रहता है।

❑❑

अमरीकी शासन की कुछ विशेषताएं

(कृष्ण चन्द्र गर्ग, पंचकूला, दूर- 0172-4010679)

१. अमेरिका में देश के लिए राष्ट्रपति, प्रान्त के लिए राज्यपाल तथा नगर के लिए नगरपालिका अध्यक्ष- ये सभी सीधे जनता के द्वारा चुने जाते हैं। इसलिए सांसदों को, विधायकों को और पार्षदों को चुनावों के पश्चात् आपसी गठजोड़ करने की या खरीद-बेच करने की ज़रूरत नहीं पड़ती।

२. विधायिका (Legislative) और कार्यपालिका (Executive) अलग अलग हैं। संसद विधायिका का काम करती है और राष्ट्रपति के ऊपर कार्यपालिका की जिम्मेदारी है।

३. संसद के दो सदन है- सैनेट (Senate) और House of Representatives. सैनेट के १०० सदस्य हैं जो हर प्रांत से दो के हिसाब से हैं। House of Representatives के ४३५ सदस्य हैं। वे हर प्रान्त से आबादी के हिसाब से कम या ज्यादा हैं।

४. सांसद और विधायक- मंत्री, मुख्यमंत्री या प्रधानमंत्री नहीं बनाए जाते और न ही उन्हें कोई और लाभ का पद दिया जाता है। वे सांसद और और विधायक ही बने रहते हैं। इसलिए उनका सम्बंध सीधा जनता से रहता है और वे जनता के लिए अच्छी व्यवस्थाएं बनाते हैं।

५. प्रशासन में राष्ट्रपति के सहायक के रूप में सचिव (Secretaries) हैं, जिनकी संख्या १०-१२ निश्चित है। राष्ट्रपति सारे देश में से योग्यता के आधार पर सचिवों का चयन करते हैं, उनकी स्वीकृति सैनेट (संसद का एक सदन) देती है।

६. अपने स्वार्थ के लिए कोई भी चुनाव आगे-पीछे नहीं कर सकता। राष्ट्रपति और संसद के चुनावों की तिथियां संविधान के द्वारा ही निश्चित की हुई हैं।

७. अवधि (Term)- राष्ट्रपति की अवधि चार वर्ष है। कोई भी व्यक्ति दो से अधिक बार राष्ट्रपति नहीं बन सकता।

संसद के एक सदन House of Representatives की अवधि दो वर्ष है तथा दूसरे सदन सैनेट (Senate) की अवधि छः वर्ष है। हर दो वर्ष के पश्चात् सैनेट के एक तिहाई सदस्य नये चुनकर आते हैं।

८. उप-चुनाव (Bye Elections) नहीं होते। राष्ट्रपति का पद खाली होने पर अगले चुनाव तक के लिए उपराष्ट्रपति को राष्ट्रपति बना दिया जाता है। उपराष्ट्रपति का पद खाली होने पर संसद की स्वीकृति से राष्ट्रपति देश में से किसी भी योग्य व्यक्ति को अगले चुनाव तक के लिए उपराष्ट्रपति बना देते हैं।

राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति का चुनाव एक जोड़े (Team) के तौर पर होता है, अलग-अलग नहीं।

संसद का कोई स्थान खाली होने पर उसी निर्वाचन क्षेत्र (Constituency) का और उसी राजनैतिक दल का कोई व्यक्ति अगले चुनाव तक के लिए मनोनीत कर दिया जाता है।

संसद भी कभी भी बीच में ही भंग नहीं होती क्योंकि संसद का अस्तित्व किसी प्रस्ताव के पास या फेल होने पर आश्रित नहीं है। इसलिए मध्यावधि चुनाव भी नहीं होते।

९. सांसद या राष्ट्रपति अपने वेतन-भत्ते स्वयं नहीं बढ़ा सकते। इस सम्बन्ध में जब कोई प्रस्ताव पास होता है, वह उस समय के सांसदों या राष्ट्रपति पर लागू नहीं होता। उनकी अवधि पूरी होने पर अगली संसद या राष्ट्रपति पर लागू होता है।

१०. न्यायपालिका- पूर्ण रूप से स्वतन्त्र तथा निष्पक्ष है। बड़े मामलों का फैसला आम जनता में से चुने गए १२ लोगों की ज्यूरी (Jury) के द्वारा सर्वसम्मति से

किया जाता है।

उच्चतम न्यायालय (Supreme Court) में ६ जज हैं। उनकी नियुक्ति आयुभर के लिए होती है। कोई स्थान खाली होने पर राष्ट्रपति किसी व्यक्ति को मनोनीत (Nominate) करते हैं। सैनेट की बहुमत से स्वीकृति के बाद ही वह व्यक्ति उच्चतम न्यायालय का जज बन पाता है।

उच्चतम न्यायालय के पास जो भी मामला आता है उसके लिए सभी ६ जज बैठते हैं और बहुमत से फैसला करते हैं।

११. देश में कोई भी दिखावे का पद (Ceremonial Office) नहीं है। सभी के लिए पद के हिसाब से काम है तथा उसी हिसाब से वेतन है।

१२. चुनाव के लिए टिकट- कोई भी राजनैतिक दल किसी को भी चुनाव लड़ने के लिए टिकट नहीं देता। सभी को उम्मीदवारी टिकट जनता में स्वयं लेना होता है। प्राईमरी (Primary) चुनाव के द्वारा जनता जिसे ठीक समझती है उसे अधिक वोट देकर अपना उम्मीदवार बनाती है।

इसीलिए किसी पार्टी का टिकट न मिलने पर कोई व्यक्ति पार्टी नहीं बदलता। वहाँ पर किसी भी व्यक्ति द्वारा पार्टी बदलना लगभग न के बराबर है।

१३. मन्त्रियों के कोटे (Quotas) या सांसद निधि आदि नहीं है। सांसदों, सचिवों, जजों, सरकारी अफसरों आदि को सरकार की तरफ से कार, कोठी, नौकर आदि भी नहीं दिए जाते।

१४. साम्प्रदायिकता- किसी भी मजहब के आधार पर देश में कोई भी कानून नहीं है। सभी कानून समता के आधार पर बने हैं। मजहब सभी के लिए एक निजी और व्यक्तिगत विषय है, राष्ट्रीय या सरकारी विषय नहीं है। किसी भी मजहब को बढ़ावा नहीं दिया जाता। इसलिए साम्प्रदायिक दंगे नहीं होते। किसी भी मजहब को लाऊड स्पीकर सार्वजनिक स्थानों पर लगाने की इजाजत नहीं है। वहाँ पर हज यात्रा के लिए सब्सिडी नहीं दी जाती। ट्रिपल तलाक आदि की समस्याएं वहाँ नहीं हैं।

१५. जातपात का नामोनिशान नहीं है। कोई ऊँच-नीच नहीं जानता।

१६. कोई भी किसी प्रकार का भी आरक्षण नहीं है। सभी कुछ योग्यता के आधार पर है। जो जिसके योग्य है, उसे वह काम मिल जाता है। योग्यता बढ़ाने के लिए सभी को अवसर उपलब्ध है।

१७. शिक्षा- हाई स्कूल अर्थात् १२ वर्ष तक की शिक्षा पूर्णतया निःशुल्क है और दस वर्ष तक की शिक्षा सभी लड़के-लड़कियों के लिए अनिवार्य है।

आरम्भ से अन्त तक की सारी शिक्षा में अध्यापक ही परीक्षक होता है। जो अध्यापक पढ़ाता है, वही परीक्षापत्र तैयार करता है और वही उन्हें जाँचता है, वही विद्यार्थियों को ग्रेड देता है और उन्हें पास फेल करता है।

दसवीं तक की शिक्षा अनिवार्य होने से देश की जनसंख्या वृद्धि पर नियन्त्रण रहता है क्योंकि पढ़े-लिखे लोगों के बच्चे कम होते हैं। इससे बेरोजगारी पर नियन्त्रण लगता है, बाल विवाह और बाल मजदूर नहीं होते।

लगभग सभी स्कूल स्थानीय सरकारों के अधीन होते हैं। प्राईवेट स्कूल तो कोई बिरला ही होता है। सरकारी स्कूलों का स्तर (standard) बड़ा ऊँचा होता है।

१८. नौकरी की सुरक्षा (Security of Service) नहीं है। इसलिए लोग मोहनत और ईमानदारी से काम करते हैं। रोटी की सुरक्षा (Security of Bread) सबके लिए है।

१९. भाषा- अमेरिका में सैंकड़ों भाषाएं बोलने वाले लोग रहते हैं। परन्तु केन्द्र सरकार तथा सभी प्रान्तीय सरकारों की भाषा एक ही है- अंग्रेजी। इसलिए सारा देश एक इकाई के रूप में उभरा है।

२०. मेहनत करने वाला कोई भी व्यक्ति गरीब नहीं है। मेहनत से कोई भी व्यक्ति थोड़े ही समय में अपनी

गरीबी दूर कर सकता है। शारीरिक काम करने वालों को मेहनताना दफतरों में काम करने वालों से कम नहीं मिलता।

२१. राजनेताओं के पास कोई व्यक्तिगत अधिकार नहीं होते। इसलिए लोग उनके आगे-पीछे नहीं फिरते। वैसे भी खुशामद करना या गिड़गिड़ाना बहुत बुरा माना जाता है। दफतरों में भी गिड़गिड़ाना नहीं पड़ता। आत्मस्वाभिमान को महत्व दिया जाता है।

२२. मुद्रा (Currency)- अमेरिका में स्थिरता इतनी है कि पिछले पचास वर्षों में वहाँ की करंसी में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। आज भी वही नोट और वही सिक्के हैं, जो पचास वर्ष पहले थे।

एक और विशेष बात- वहाँ के हर सिक्के पर लिखा रहता है- "In God We Trust" अर्थात् हमें ईश्वर की सत्ता में विश्वास है।

२३. अर्थ व्यवस्था का आधार- निजि क्षेत्र (Private Sector) है। बस, रेल, हवाई जहाज, टैलिफोन, टेलिविजन, रेडियो, समाचारपत्र, बिजली, पानी, बैंक, बीमा- सभी जनता के निजी हाथों में हैं। स्कूल और पुलिस स्थानीय सरकार के पास हैं। पोस्ट ऑफिस केन्द्रीय सरकार के पास है।

इंग्लैण्ड के पूर्व प्रधानमंत्री और बड़े राजनीतिज्ञ विंसटन चर्चिल (Winston Churchill) ने कहा था- 'Destroy free market market, you create black market' अर्थात् स्वतन्त्र बाजार समाप्त करने का मतलब है काला बाजार पैदा करना।

२४. अमेरिका में कार्यकुशलता के कारण-

(a) कोई आरक्षण नहीं, सभी नौकरियाँ योग्यता के आधार पर हैं।

(b) नौकरी की सुरक्षा नहीं, परन्तु रोटी, कपड़ा, मकान, शिक्षा की सुरक्षा सबके लिए है।

(c) सम्मिलित जिम्मेदारी (Collective Responsibility) का सिद्धान्त अमेरिका में नहीं चलता, प्रत्येक व्यक्ति की अपनी जिम्मेदारी है।

(d) अर्थ व्यवस्था का आधार निजी क्षेत्र (Private Sector) है।

२५. अमरीकी समाज के गुण-

(a) Rule of Law- कानून का राज

(b) Dignity of Labour- मेहनत का सम्मान

(c) Discipline- अनुशासन

(d) Punctuality- समय के पाबन्द

(e) No Adulteration- कोई मिलावट नहीं

(f) Sense of Cleanliness- सफाई की समझ

(g) Politeness- नम्रता

२६. अमरीकी संविधान' अमेरिका का संविधान १७८७ में बना था। उसमें अब तक कुल २७ संशोधन हुए हैं। मूल संविधान तथा सभी संशोधनों को मिलाकर कुल पच्चीस पृष्ठ की पुस्तिका के आकार का अमेरिका का संविधान है। भारत का संविधान उससे बीस गुणा बड़ा है। उसमें एक सौ से अधिक संशोधन हो चुके हैं।

अमेरिका की सुव्यवस्था, समृद्धि, उन्नति और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का श्रेय उनके २३१ वर्ष पुराने संविधान को तथा उसे बनाने वालों को ही जाता है। ❑❑

पृष्ठ २ का शेष

मदिरापान व नशा करने में ही रहता है। मदिरा का सेवन करने वाले सभी लोग जानते हैं कि मदिरा का सेवन करना बुरी प्रवृत्ति व आदत है, परन्तु कुछ बार मदिरा पीने से जो आदत पड़ जाती है, उसको छोड़ने की इच्छा करने पर भी वह छोड़ नहीं पाते। समाज में अधिकांश अपराध करने वाले लोग अपराध करने से पूर्व मदिरा का सेवन करते हैं। चोरी हत्या, बलात्कार भी शराब पीकर ही किये जाते हैं। आजकल मदिरापान करना एक फैशन सा हो गया है। जिन लोगों को मदिरापान की बुरी आदत होती है, उनकी संगति में कोई भला सज्जन मनुष्य आ जाये, तो यह लोग उसको भी नाना प्रकार से झूठे प्रलोभन वाले वचन बोलकर उनको मदिरा पान करने के लिए बाध्य करते हैं। हमारे अनेक साथी शराब का सेवन करते थे। एक सज्जन

मित्र का बड़ा अच्छा परिवार था। आज वह इस संसार में नहीं है। लगभग १०-१५ वर्ष शराबादि के अत्यधिक सेवन से वह मृत्यु का ग्रास बन गये। ऐसे ही एक मित्र हमारे साथ कार्यरत रहे। वह फुटबाल के बहुत अच्छे खिलाड़ी थे। देहरादून व इससे बाहर भी उनकी बहुत प्रसिद्धि थी। आफिस में वह शराब प्रेमियों के साथ उठते बैठते थे। युवावस्था में ही उनको मदिरा की लत लग गई। आज यद्यपि वह जीवित हैं, पर उनका शरीर कहने मात्र का शरीर है। वह जर्जरित व शक्तिहीन हो चुका है। अब सुना है कि उन्होंने मजबूरी में शराब छोड़ रखी है। शायद रोगी, शक्तिहीन व वृद्ध होने पर सभी को शराब छोड़नी पड़ती है। परिवार उनके खर्चीले उपचार व सेवा करके दुःखी हो जाता है। इसके बाद शराबी व्यक्ति को मृत्यु का ग्रास बनना पड़ता है। मृत्यु से पूर्व का उनका जीवन नारकीय जीवन होता है। कुछ का उससे भी अधिक दुःखमय होता है। हम एक ऐसे मित्र को भी जानते हैं, जिनकी आय बहुत थी। उनके कार्य में सहयोगी मदिरापान करते थे। उन्हें उनकी संगति करनी पड़ती थी अन्यथा उन्हें वह काम छोड़ना पड़ता। उन्होंने काम नहीं छोड़ा। धन तो उन्होंने बहुत कमाया परन्तु उनको भी शराब व मांसाहार का रोग लग गया था। कई वर्ष पहले यात्रा कर रहे थे, वाहन में बैठे-बैठे सो गये, निद्रावस्था में ही एक सड़क दुर्घटना में उनका देहावसान हो गया। व्यक्ति अच्छे थे और ऋषि के प्रशंसक थे। आर्य साहित्य के अध्ययन में भी उनकी रुचि थी परन्तु वह जहाँ कार्यरत थे वहाँ अधिक लोग मदिरापान करते थे। वह भी उसमें गिर गये और असमय इस संसार से चल बसे। हमें व दूसरों को उनसे बहुत प्रेरणा मिलती थी। हम उनसे वंचित हो गये।

हम आजकल अपने एक मित्र से मिलने जाते हैं। वहाँ एक सेवानिवृत अधिकारी आते थे, जो मदिरापान करते थे। एक बार उनसे वार्तालाप चल रहा था। वह अपने युवावस्था काल की बातें सुनाने लगे और शराब और मांस की प्रशंसा करने लगे। हमने उनकी बातों को सुना और कर्मफल सिद्धान्त व शारीरिक रोगों के उदाहरण के आधार पर उनका निराकरण किया। हमने तब भी उनकी बातों के आधार पर शराब और मांस के सम्बन्ध में एक लेख लिखा। आजकल उनकों आँखों से दिखना बहुत कम हो गया है। वह अब पढ़-लिख नहीं सकते। एक सहायक के साथ कहीं आ-जा सकते हैं। नेत्र दोष व अन्धता भी अधिक मात्रा में मदिरापान करने का परिणाम होता है। अब डॉक्टर उन्हें ४५ हजार के इन्जेक्शन लगाते हैं परन्तु फिर भी वह स्वस्थ नहीं हो पा रहे हैं। बुद्धिमान व्यक्ति वह होता है, जो कार्य करने से पहले उसके परिणाम का चिन्तन कर उसको जान लेता है। शराब का पीना किसी भी दृष्टि से लाभप्रद नहीं है। इससे हानि ही हानि है। ऐसे लोगों को सबसे पहले अपनी संगति बदलनी चाहिये। मदिरापान करने वालों की संगति यथाशीघ्र छोड़ देनी चाहिये। और स्वास्थ्यवर्धक भोजन गोदुग्ध, गोघृत, फल, तरकारियों का सेवन करने के साथ प्रातः भ्रमण, व्यायाम व योग की ध्यान विधि से ईश्वरोपासना व दैनिक यज्ञ आदि करना चाहिये। ऐसा करके दानव मनुष्य भी मानव व देवता बन सकते हैं और अपना और अपने शुभचिन्तक परिवारजनों का हित कर सकते हैं।

हमने मदिरापान करने वाले परिवारों की दुर्दशा को भी देखा है। ऐसे लोगों की पत्नियों को अपना व बच्चों का पालन करने के लिए छोटा-मोटा कार्य करना पड़ता है। कई तो दूसरों के घरों में चौका-बर्तन आदि कार्य करती हैं। बच्चों व परिवारजनों को अच्छा भोजन नसीब नहीं होता। बच्चे अच्छे स्कूलों में नहीं पढ़ पाते। बीच में ही उनकी पढ़ाई रूक जाती है। मदिरापान करने वाले परिवार के मुख्य व्यक्ति बच्चों के पिता प्रायः अस्वस्थ रहते हैं। धन कमा नहीं पाते और यदि कुछ कहीं से मिलता है, तो उससे मदिरापान करते हैं। ऐसे परिवार कर्जदार हो जाते हैं और समाज में उनकी प्रतिष्ठा भी नहीं होती। सभी लोग ऐसे परिवारों से दूरी बनाकर रखते हैं। सहायता के लिए न कोई पड़ोसी आता है और न रिश्तेदार। ऐसे बच्चों की मनोदशा का हमने अनुभव किया है। वह अपनी पीड़ा किसी से कह नहीं

सकते। प्रतिभावान व पुरुषार्थी होने पर भी समाज की दौड़ में वह पिछड़ जाते हैं और साधारण कार्य करने को विवश होते हैं। कालान्तर में वह स्वयं संगति दोष और विचारों की दृढ़ता न होने से स्वयं भी शराब का शिकार हो जाते हैं और उनके भी परिवार का पतन होता है। इससे यही सिद्ध होता है कि मनुष्य शराब का सेवन किंचित भी न करे और न ही मदिरापान करने वाले लोगों की संगति करे।

यह बहुत ही दुःखद है कि हमारी प्रतिनिधि सरकारें अपने भारी भरकम खर्चों को पूरा करने के लिए राजस्व की प्राप्ति के लिए शराब जैसी हानिकारक व देश के पतन में सहकारी मदिरापान की बिक्री बढ़ाने में लगी रहती है। सरकार को तो राजस्व कम ही मिलता है। सरकार से अधिक तो शराब व्यापारियों व माफियाओं के पास धन जाता है, जिससे अच्छे काम होते होंगे, इसकी सम्भावना न के समान है। यदि शराब की कुल खपत पर विचार करें, तो स्थिति चौंकाने वाली होगी। शराब पीने वाले अधिकांश लोग मांस भी खाते हैं। इससे पशु हिंसा को बढ़ावा मिलता है जिसकी हमारे वेद आदि सभी धर्म ग्रन्थों व धार्मिक महापुरुषों ने निन्दा की है। राम, कृष्ण व दयानन्द के देश में उनके अनुयायी लोग यदि मदिरा पान करते हैं तो यह देशवासियों द्वारा अपने महापुरुषों का अपमान है। आश्चर्य तो इस बात का है कि हमारे बहुत से धार्मिक पुजारी व मठ मन्दिरों के संचालक स्वामी भी इन बुरे पदार्थों के सेवन का विरोध नहीं करते। हमने मन्दिरों आदि में कहीं ऐसा कोई संकेत नहीं देखा कि जहाँ लिखा हो कि मदिरा और मांस का सेवन करने वाला मनुष्य धार्मिक नहीं होता। यह पशुओं को कष्ट देने के कारण अपराध भी होता है, जिसका दण्ड ईश्वर के विधान से उन्हें मिलता है। पशुओं का मांस खाने से रोगों से संबंधित जानकारियां भी हमारे पौराणिक सनातनी धार्मिक विद्वान् व धर्मप्रचारक अपने अनुयायियों को नहीं देते। यह कैसे नेता व विद्वान् हैं, जो अपने ही अनुयायियों को पथभ्रष्ट व पापों में लिप्त रहने देते हैं। यह स्थिति दुःखद है।

यदि हम अपने समाज व देश को उत्तम बनाना चाहते हैं व उत्कर्ष की ओर ले जाना चाहते हैं, तो हमें युवापीढ़ी सहित सभी लोगों को जो मदिरा व नशे का सेवन करते हैं, इससे होने वाली हानियों का प्रचार करके उन्हें बचाना होगा। स्वामी रामदेव जी धर्मप्रचारकों में अपवाद हैं। वह अपने उपदेशों व व्याख्यानों में मदिरा, मांस, अण्डे व धूम्रपान आदि की आलोचना करते रहते हैं। सभी धार्मिक नेताओं व विद्वानों का यह कर्तव्य है कि वह लोगों को सत्यासत्य से परिचित करायें और उन्हें बुराइयों को छोड़ने की प्रेरणा करें। प्राचीन काल में हमारे देश में महाराज अश्वपति हुए हैं, जिन्होंने कुछ संन्यासी विद्वानों को उनका आतिथ्य ग्रहण न करने पर कहा था कि मेरे राज्य में कोई चोर नहीं है, कोई कंजूस नहीं है, कोई मदिरा व मांस आदि का सेवन करने वाला नहीं है, कोई ऐसा नहीं जो प्रतिदिन अग्निहोत्र यज्ञ न करता हो, कोई व्यभिचारिणी स्त्री नहीं है, तो व्यभिचारी पुरुष होने का तो प्रश्न ही नहीं है। आज विश्व में एक भी ऐसा देश नहीं, जहाँ के लोग मदिरा वा तामसिक पदार्थों का सेवन न करते हों। यह सत्य है कि विज्ञान ने असीम उन्नति की है परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि नैतिकता व चारित्रिक व्यवहार की उपेक्षा की जाये। मदिरापान करने वाले व मांसाहारियों को ऐसा करना इस जन्म व परजन्म में बहुत महंगा पड़ेगा। ईश्वर सबको प्रेरणा करें कि वह असत्य व दुर्गुणों का त्याग कर सत्य व सद्गुणों को धारण कर अपने समाज व देश को विश्व का आदर्श लोक बनायें। ईश्वर हमें असत्य से सत्य की ओर, अन्धकार से प्रकाश की ओर और मृत्यु से अमरता की ओर चलने की प्रेरणा करें और उसका पालन कर अपने जीवन को आदर्श जीवन बनायें। मदिरापान, मांसाहार, अण्डों का सेवन और धूम्रपान जैसे व्यसनों का सर्वथा त्याग कर दें। इसी में हमारी, हमारे परिवार, समाज व देश की भलाई है। सभी सरकारों को भी समाज, राज्य व देश को बुराइयों से मुक्त करने में अपनी प्रमुख भूमिका को तत्परता व प्रभावपूर्ण तरीके से निभाना चाहिये। ओ३म् शम्।

❑❑

आर./आर. नं० १६३३०/६७
Post in Delhi R.M.S
०५-११/०७/२०१८
भार- ४० ग्राम

जुलाई 2018

रजिस्टर्ड नं० DL (DG -11)/8029/2018-20
लाईसेन्स नं० यू (डी०एन०) १४४/२०१८-२०
Licenced to post without prepayment
Licence No. U (DN) 144/2018-20

पाठकों से निवेदन

१. अपने पत्रों में अपनी ग्राहक संख्या अवश्य ही लिखा करें, अन्यथा कार्यवाही सम्भव नहीं होगी।
२. १५ तारीख तक प्रतीक्षा करके ही दुबारा अंक मँगाएं, यदि अंक न पहुँचा हो।
३. यदि आप अपना पता बदलवायें तो यह ध्यान रखें कि बदले हुए पते पर अंक-प्रेषण एक माह बाद आरम्भ होगा।
४. अंक के रेपर पर अपना पता चैक कर लिया करें। यदि कोई त्रुटि हो, तो सूचना दे दिया करें।
५. जिन ग्राहकों का शुल्क समाप्त है, अविलम्ब भेजने की कृपा करें।

ओ३म्

भारत में फैले सम्प्रदायों की निष्पक्ष व तार्किक समीक्षा के लिए उत्तम कागज़, मनमोहक जिल्द, सुन्दर आकर्षक छपाई एवं (द्वितीय संस्करण से मिलान कर शुद्ध प्रामाणिक संस्करण)

सत्य के प्रचारार्थ

सत्यार्थ प्रकाश

सत्य के प्रचारार्थ

● प्रचार संस्करण (अजिल्द) 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 50 रु.	प्रचारार्थ 30 रु.	प्रचारार्थ मूल्य पर कोई कमीशन नहीं
● विशेष संस्करण (सजिल्द) 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 80 रु.	प्रचारार्थ 50 रु.	
● स्थूलाक्षर सजिल्द 20×30÷8	मुद्रित मूल्य 150 रु.		प्रत्येक प्रति पर 20% कमीशन

10 या 10 से अधिक प्रतियाँ लेने पर विशेष अतिरिक्त कमीशन

कृपया, एक बार सेवा का अवसर अवश्य दें और महर्षि दयानन्द की अनुपम कृति सत्यार्थ प्रकाश के प्रचार प्रसार में सहभागी बनें

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट
427, मन्दिर वाली गली, खारी बावली, दिल्ली-6
Ph. :011-43781191, 09650622778
E-mail : aspt.india@gmail.com

दिनेश कुमार शास्त्री
कार्यालय व्यवस्थापक
मो०-९६५०५२२७७८

छपी पुस्तक/पत्रिका

श्री सेवा में..........
ग्राम..........
डा0..........
जिला..........

मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक धर्मपाल आर्य, स्वामित्व आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, ४२७, गली मन्दिर वाली, नया बांस, खारी बावली, दिल्ली-११०००६ से प्रकाशित एवं तिलक प्रिंटिंग प्रेस, २०४६, बाजार सीता राम, दिल्ली-११०००६ से मुद्रित।